वहाबियत इतिहास के दर्पण मे

अलहसनैन इस्लामी नेटवर्क

वहाबियत, वास्तविकता व इतिहास

वहाबियत की आधारशिला रखने वाले इब्ने तैमिया ने अपने पूरे जीवन में बहुत सी किताबें लिखीं और अपनी आस्थाओं का अपनी रचनाओं में उल्लेख किया है। उन्होंने ऐसे अनेक फ़त्वे दिए जो उनसे पहले के किसी भी मुसलमान धर्मगुरुओं ने नहीं दिए विशेष रूप से ईश्वर के बारे में। वह्हाबियों का मानना है कि ईश्वर वैसा ही है जैसा कि क़ुरआन की कुछ आयतों में उल्लेख है हालांकि ऐसी आयतों की क़ुरआन की दूसरी आयतें व्याख्या करती हैं और पैग़म्बरे इस्लाम व उनके पवित्र परिजनों के कथनों से भी ऐसी आयतों की तार्कपूर्ण व्याख्या की गयी है। किन्तु इब्ने तैमिया और दूसरे सलफ़ी क़ुरआन की आयतों की विवेचना व स्पष्टीकरण से दूर रहे और इस प्रकार ईश्वर के अंग तथा उसके लिए परिसिमा को मानने लगे।

इब्ने तैमिया और उनके प्रसिद्ध शिष्य इब्ने क़य्यिम जौज़ी ने अपनी किताबों में इस बिन्दु पर बल दिया है कि ईश्वर सृष्टि की रचना करने से पूर्व ऐसे घने बादलों के बीच में था कि जिसके ऊपर और न ही नीचे हवा थी, संसार में कोई भी वस्तु मौजूद नहीं थी और ईश्वर का अर्श अर्थात ईश्वर की परम सत्ता का प्रतीक विशेष स्थान पानी के ऊपर था।

इस बात में ही विरोधाभास मौजूद है। क्योंकि एक ओर यह कहा जा रहा है कि ईश्वर इससे पहले कि किसी चीज़ को पैदा करता, घने बादलों के बीच में था जबकि बादल स्वयं ईश्वर की रचना है। इसलिए यह कैसे माना जा सकता है कि रचना अर्थात बादल रचनाकार से पहले सृष्टि में मौजूद रहा है? क्या इस्लामी शिक्षाओं से अवगत एक मुसलमान इस बात को मानेगा कि महान ईश्वर को ऐसे अस्तित्व की संज्ञा दी जाए जो ऐसी बेबस हो कि घने बादलों में घिरी हो और बादल उस परम व अनन्य अस्तित्व का परिवेष्टन किए हो? इस्लाम के अनुसार कोई भी वस्तु ईश्वर पर वर्चस्व नहीं जमा सकती क्योंकि क़ुरआनी आयतों के अनुसार ईश्वर का हर वस्तु पर प्रभुत्व है और पूरी सृष्टि उसके नियंत्रण में है। इब्ने तैमिया के विचारों का इस्लामी शिक्षाओं से विरोधाभास पूर्णतः स्पष्ट है।

वहहाबियों की आस्थाओं में एक आस्था यह भी है कि ईश्वर किसी विशेष दिशा व स्थान में है। वहहाबियों का मानना है कि ईश्वर के शरीर के अतिरिक्त व्यवहारिक विशेषता भी है और शारीरिक तथा बाहय दृष्टि से भी आसमानों के ऊपर है। इबने तैमिया में अपनी किताब मिन्हाजुस्सुन्नह में इस विषय का इस प्रकार उल्लेख किया हैः हवा, ज़मीन के ऊपर है, बादल हवा के ऊपर है, आकाश, बादलों व धरती के ऊपर हैं और ईश्वर की सत्ता का प्रतीक अर्श आकाशों के ऊपर है और ईश्वर इन सबके ऊपर है। इसी प्रकार वे पूर्वाग्रह के साथ कहते हैः जो लोग

यह मानते हैं कि ईश्वर दिखाई देगा किन्तु ईश्वर के लिए दिशा को सही नहीं मानते उनकी बात बुद्धि की दृष्टि से अस्वीकार्य है।

प्रश्न यह उठता है कि इब्ने तैमिया का यह दृष्टिकोण क्या पवित्र क़ुरआन के सूरए बक़रा की आयत क्रमांक पंद्रह से स्पष्ट रूप से विरुद्ध नहीं है जिसमें ईश्वर कह रहा हैः पूरब पश्चिम ईश्वर का है तो जिस ओर चेहरा घुमाओगे ईश्वर वहां है। ईश्वर हर चीज़ पर छाया हुया व सर्वज्ञ है। और इसी प्रकार सूरए हदीद की आयत क्रमांक चार में ईश्वर कह रहा हैः जहां भी हो वह तुम्हारे साथ है।

अब सूरए सजदा की इस आयत पर ध्यान दीजिएः ,,,और फिर उसका संचालन अपने हाथ में लिया और उससे हटकर न तो कोई तुम्हारा संरक्षक और न ही उसके मुक़ाबले में कोई सिफ़ारिश करने वाला है।

सूरए हदीद की आयत क्रमांक 4 में ईश्वर कह रहा हैः फिर सृष्टि का संचालन संभाला और जो कुछ ज़मीन में प्रविष्ट करती है उसे जानता है।

और अब सूरए ताहा की आयत क्रमांक 5 पर ध्यान दीजिएः वही दयावान जिसके पास पूरी सृष्टि की सत्ता है।

वहहाबी इन आयतों के विदित रूप के आधार पर ईश्वर की सत्ता के प्रतीक के लिए विशेष रूप व आकार को गढ़ लिया है कि जिसके सुनने पर शायद हंसी आ जाए। वहहाबियों का मानना है कि ईश्वर का भार बहुत अधिक है और वह अर्श पर बैठा है। इब्ने तैमिया कि जिसका सलफ़ी अनुसरण करते हैं, अनेक किताबों में लिखा है कि ईश्वर अपने आकार की तुलना में अर्श के हर ओर से अपनी चार अंगुली अधिक बड़ा है। इब्ने तैमिया कहते हैः पवित्र ईश्वर अर्श के ऊपर है और उसका अर्श गुंबद जैसा है जो आकाशों के ऊपर स्थित है और अर्श ईश्वर के अधिक भारी होने के कारण ऊंट की काठी भांति आवाज़ निकालता है जो भारी सवार के कारण निकालता है।

इब्ने क़य्यिम जौज़ी जो इब्ने तैमिया के शिष्य व उनके विचारों के प्रचारक तथा मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब के पौत्र भी हैं, अपनी किताबों में ईश्वर का इस प्रकार उल्लेख किया है कि सुनने वाले उसके बचपन की कलपनाएं याद आ जाती हैं। वे कहते हैः ईश्वर का अर्श कि जिसकी चौड़ाई दो आकाशों के बीच की दूरी जितनी है, आठ भेड़े के ऊपर है कि जिनके पैर के नाख़ुन से घुटने तक की दूरी भी दो आकाशों के बीच की दूरी की भांति है। ये भेड़े एक समुद्र के ऊपर खड़े हैं कि जिसकी गहराई दो आकाशों के बीच की दूरी की जितनी है और समुद्र सातवें

आकाश पर स्थित है। ये बातें ऐसी स्थिति में हैं कि न तो पवित्र क़ुरआन की आयतें, न पैग़म्बरे इस्लाम और न ही उनके सदाचारी साथियों ने इस प्रकार की निराधार व अतार्किक विशेषताओं का उल्लेख किया बल्कि उनका मानना है कि ईश्वर कैसा है इसका उल्लेख असंभव है।

हर चीज़ से ईश्वर के आवश्यकतामुक्त होने की आस्था धर्म व पवित्र क़ुरआन की महत्वपूर्ण शिक्षाओं में है और पवित्र क़ुरआन की अनेक आयतों में इस विषय पर चर्चा की गयी है। जैसा कि पवित्र क़ुरआन के सूरए बक़रा की आयत क्रमांक 263 में ईश्वर कह रहा हैः ईश्वर आवश्यकतामुक्त और सहनशील है। इसी प्रकार सूरए बक़रा की आयत क्रमांक 267 में हम पढ़ते हैः ईश्वर आवश्यकतामुक्त और सारी प्रशंसा उसी से विशेष हैं।

पवित्र क़ुरआन की इन आयतों में इस प्रकार के अर्थ को केवल चिंतन मनन द्वारा ही समझा जा सकता है। पवित्र क़ुरआन मानव समाज को निरंतर तर्क का निमंत्रण देता है और दावा करने वालों से कह रहा है कि यदि उनके पास अपनी बात की सत्यता का कोई तर्क है तो उसे बयान करे।

उदाहरण स्वरूप तर्क की दृष्टि से यह कैसे माना जा सकता है कि ईश्वर आठ भेड़ों पर सवार है। क्योंकि यदि ईश्वर वास्तव में आठ भेड़ों पर सवार होगा तो उसे उनकी आवश्यकता होगी। जबकि अनन्य ईश्वर पवित्र है इस त्रुटि से कि उसे किसी चीज़ की आवश्यकता पड़े। इसी प्रकार इस भ्रष्ट विचार के आधार पर कि ईश्वर का अर्श आठ भेड़ों पर है, यह निष्कर्श निकलेगा कि ये आठ भेड़ें भी जब से ईश्वर है और जब तक रहेगा, मौजूद रहेंगी। जबकि ईश्वर सूरए हदीद की चौथी आयत में स्वयं को हर चीज़ से पहले और हर चीज़ के बाद बाक़ी रहने वाला अस्तित्व कह रहा है और सलफ़ियों के आठ भेड़ों सहित दूसरी कहानियों से संबंधित किसी बात का उल्लेख नहीं है। पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल लाहै अलैहे व आलेही व सल्लम ईश्वर की विशेषता के संबंध में कहते हैः तू हर चीज़ से पहले था और तुझसे पहले कोई वस्तु नहीं थी और तू सबके बाद भी है।

अर्श पर ईश्वर के होने का अर्थ ईश्वर की सत्ता है जो पूरी सृष्टि पर छायी हुयी है और पूरे संसार का संचालन उसके हाथ में है। अर्श से तात्पर्य यह है कि ईश्वर का पूरी सृष्टि पर नियंत्रण और हर वस्तु पर उसका शासन है जो अनन्य ईश्वर के अभिमान के अनुरूप है। इसलिए अर्श पर ईश्वर के होने का अर्थ सभी वस्तुओं चाहे आकाश या ज़मीन, चाहे छोटी चाहे बड़ी चाहे महत्वपूर्ण और चाहे नगण्य हो सबका संचालन उसके हाथ में है। परिणामस्वरूप ईश्वर हर चीज़ का पालनहार और

इस दृष्टि से वह अकेला है। रब्ब से अभिप्राय पालनहार और संचालक के सिवा कोई और अर्थ नहीं है किन्तु सलफ़ी ईश्वर के अर्श की जो विशेषता बयान करते हैं वह न केवल यह कि धार्मिक मानदंडों व बुद्धि से विरोधाभास रखता है बल्कि उसे बकवास के सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता। सलफ़ी इसी प्रकार ईश्वर के अर्श से ऐसे खंबे अभिप्राय लेते हैं कि यदि उनमें से एक न हो तो ईश्वर का अर्श ढह जाएगा और ईश्वर उससे ज़मीन पर गिर पड़ेगा। हज़रत अली अलैहिस्सलाम जिन्हें पैग़म्बरे इस्लाम ने अपने ज्ञान के नगर का द्वार कहा है, ईश्वर के अर्श की व्याख्या इन शब्दों में करते हैः ईश्वर ने अर्श को अपनी सत्ता के प्रतीक के रूप में बनाया है न कि अपने लिए कोई स्थान।

वहाबियत, वास्तविकता व इतिहास-2

मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब ने कई शताब्दियों के बाद इब्ने तय्मिया के भ्रष्ठ विचारों का प्रचार करना आरंभ कर दिया। इन्ने तयमिया के भ्रष्ठ, ग़लत और फूट डालने वाले विचारों को १९वीं ईसवी शताब्दी के आरंभ में इतिहास की बहुत ही ख़राब व विषम स्थिति में प्रस्तुत किया गया। उस समय इस्लामी जगत को चारों ओर से पश्चिमी साम्राज्यवादियों के कड़े आक्रमणों का सामना था। ब्रिटेन भारत के बड़े भाग पर अपना आधिपत्य जमाने के साथ पूरब की ओर से फार्स की खाड़ी को अपने नियंत्रण में करने की चेष्टा में था। उसकी सेनाएं लगातार दक्षिण और

पश्चिम की ओर से ईरान की ओर आगे बढ़ रही थीं। फ्रांसिसियों ने भी नेपोलियन के नेतृत्व में मिस्र, सीरिया और फिलिस्तीन का अतिग्रहण कर लिया और वे भारत में प्रवेश की चेष्टा में थे। रूस के ज़ार शासक भी ईरान और उसमानी साम्रज्य पर बारम्बार आक्रमण करके अपनी सत्ता क्षेत्रफल को फिलिस्तीन और फार्स की खाड़ी तक विस्तृत करना चाह रहे थे। यहां तक कि अमेरिकी भी उस समय उत्तरी अफ्रीक़ा के इस्लामी देशों पर लोभ की दृष्टि लगाये हुए थे। वे लीबिया और अलजीरिया के नगरों पर गोला बारी करके इस्लामी जगत में पैठ बनाने की जुगत में थे। इस कठिन स्थिति में मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब ने मुसलमानों को नास्तिक कहकर और अपने भ्रष्ठ विचारों को पेश करके इस्लामी एकता को कड़ा आघात पहुंचाया जबकि उस समय मुसलमानों को शत्रुओं के मुक़ाबले में एकता, समरसता और एक दूसरे से सहयोग की अत्यंत आवश्यता थी।

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि उस समय ब्रिटेन मुसलमान राष्ट्रों के मध्य पैठ बनाने और उन्हें अपना उपनिवेश बनाने में आगे आगे था। बूढ़े साम्राज्य ब्रिटेन की प्रसिद्ध व प्रभावी शैली लोगों के मध्य फूट डालना और उनकी सम्पत्ति व स्रोतों को लूटना था। इसी परिप्रेक्ष्य में ब्रिटेन का प्रयास इस्लामी जगत में धार्मिक मतभेदों को हवा देना था। इसी कारण कुछ इतिहासकार वह्हाबी सम्प्रदाय के गठन को ब्रिटेन की गतिविधियों से असंबंधित नहीं मानते।

इतिहास में ब्रिटिश जासूस मिस्टर HAMFAR और मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब के बीच संबंधों का उल्लेख किया गया है। मिस्टर हम्फरे इस्लामी देशों में ब्रिटेन का जासूस था जो विदित में इस्लामी चोला पहनकर मुसलमानों के मध्य फूट डालने के मार्गों की खोज में था। हम्फरे ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि इराक़ के दक्षिण में स्थित बसरा नगर में उसकी भेंट मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब से हुई। हम्फरे मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब के बारे में कहता है" मुझे, अपना खोया मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब में मिल गया। वह धार्मिक नियमों के प्रति कटिबद्ध नहीं था। उसमें अहं भरा हुआ था और वह अपने समय के विद्वानों व धर्मगुरूओं से घृणा करता था वह स्वयं को सही समझता था यहां तक कि मुसलमानों के चार ख़लीफाओं को भी कोई महत्व नहीं देता था और वह क़ुरआन एवं सुन्नत के बारे में केवल अपने अल्प विचारों व ज्ञान पर भरोसा करता था। ये विशेषताएं उसकी सबसे बड़ी कमज़ोरी थीं और इन्हीं के माध्यम से मैंने उसमें प्रवेश किया और उस पर काम किया" स्वयं हम्फर के कथनानुसार "मैंने मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब को वह्हाबी नाम का सम्प्रदाय उत्पन्न करने के लिए उकसाया और उसके तथा मोहम्मद बिन सऊद के प्रति ब्रिटिश सरकार के समर्थन की घोषणा की।

जो चीज़ निश्चित है वह यह है कि धर्मगुरू और विद्वान लोग यहां तक कि मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब के पिता और उसके भाई भी मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब के अतार्किक एवं भ्रष्ठ विचारों के मुखर विरोधी थे। इस प्रकार से कि मात्र अपने पिता की मृत्यु के बाद मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब ने अपने भ्रष्ठ विचारों को व्यक्त किया। आरंभ से ही उसे अपने भ्रष्ठ विचारों के प्रकट करने में धर्मगुरूओं एवं लोगों के विरोधों का सामना था परंतु उसने अपने भ्रष्ठ विचारों को नहीं छोड़ा। मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब सऊदी अरब के हुरैमला नगर में वहहाबियत का प्रचार और अपने ग़लत विचारों को बयान करना आरंभ कर दिया। उसके इस कार्य से लोग क्रोधित व उत्तेजित हो उठे यहां तक कि वह इस नगर को छोड़ने पर बाध्य हो गया। वह हुरैमला नगर से ओअय्यना नगर चला गया। उस समय ओअय्यना नगर का शासक उसमान बिन माअमर था। उसने अब्दुल वहहाब को अपने यहां स्वीकार कर लिया और अब्दुल वहहाब ने भी इसके बदले में वचन दिया कि नज्द क्षेत्र के रहने वाले समस्त लोगों को उसमान बिन माअमर का आज्ञापालक बना देगा परंतु अहसा क्षेत्र के शासक की होशियारी के कारण उस्मान ने अब्दुल वहहाब को ओअय्यना नगर से बाहर निकाल दिया।

११६० हिजरी कमरी में ओअय्यना से बाहर निकाल दिये जाने के बाद मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब नज्द के प्रसिद्ध नगर देरइय्या की ओर चला गया। उस समय

मोहम्मद बिन सऊद अर्थात सऊद परिवार का दादा देरइय्या का शासक था। मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब ने नगर के शासक का आह्वान किया कि वह उसके साथ सहकारिता करे और उसने मोहम्मद बिन सऊद से वादा किया कि भ्रष्ठ वह्हाबी विचारों को फैलाकर उसके शासन के क्षेत्रफल को विस्तृत करेगा। मोहम्मद बिन सऊद ने अब्दुल वह्हाब के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और परिणाम स्वरुप दोनों ने समझौता किया कि सरकार की बागडोर मोहम्मद बिन सऊद के हाथों में रहे और वह्हाबी विचारों का प्रचार अब्दुल वह्हाब करे। इस समझौते को मज़बूत बनाने के उद्देश्य से दोनों परिवारों के मध्य विवाह भी हो गया।

अब्दुल वह्हाब ने सऊद परिवार की सत्ता की छत्रछाया में अपने विचारों के प्रचार को विस्तृत किया। शीघ्र ही निकटवर्ती नगरों एवं क़बीलों पर आक्रमण आरंभ हो गये। अब्दुल वह्हाब ने पहला कार्य यह किया कि ओअय्यना नगर के चारों ओर पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहि व आलेहि व सल्लम के साथियों की जो समाधियां व दर्शनस्थल थे उसे ध्वस्त करा दिया और उन मुसलमानों को अनेकेश्वरवादी व मूर्ति की पूजा करने वाला कहा तथा उनके नास्तिक होने का फतवा दिया जो ईश्वरीय दूतों को माध्यम बनाकर महान ईश्वर से दुआ करते थे। अब्दुल वह्हाब इस प्रकार के मुसलमानों की हत्या को वैध समझता था तथा उनकी धन- सम्पत्ति को ज़ब्त कर लेने को युद्ध में लूटा सामान समझता था। उसके बाद

अब्दुल वह्हाब के अनुयाई उसके इसी फतवे को आधार बनाकर हज़ारों निर्दोष मुसलमानों की हत्या की। यहां पर यह जानना उचित होगा कि उस समय देरईय्या के लोग बहुत ही कठिन व निर्धनता की स्थिति में जीवन गुजार रहे थे परंतु इन आक्रमणों व युद्धों के कारण देरईय्या नगर में दूसरे मुसलमानों के लूटे सामानों की भरमार हो गयी।

आलूसी सुन्नी मुसलमान इतिहासकार है और उसका भी रूझान अब्दुल वह्हाब के विचारों की ओर है। वह "इब्ने बोशर नज्दी" नामक इतिहासकार की "तारीख़े नज्द" नामक पुस्तक के हवाले से इस प्रकार बयान करता है" मैं अर्थात इब्ने बोशर आरंभ में देरईय्या नगर के लोगों के बहुत निर्धन होने का साक्षी था परंतु बाद में यह नगर सऊद के काल में धनी नगर में परिवर्तित हो गया यहां तक कि इस नगर के हथियार भी सोने से सुसज्जित कर दिये गये। नगर के लोग अच्छे घोड़ों पर सवारी करते थे, मूल्यवान वस्त्र पहनते थे और धन- दौलत की हर आवश्यकता से सम्मन्न हो गये थे। इस सीमा तक कि ज़बान उन सबका उल्लेख करने से अक्षम है। इन सबके साथ इब्ने बोशर ने अपनी किताब में इस बात का उल्लेख नहीं किया है कि यह अपार सम्पत्ति कहां से आई थी परंतु इतिहास पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि नज्द के जिन नगरों के मुसलमानों व क़बीलों ने वह्हाबी विचारों को स्वीकार नहीं किया उन पर आक्रमण किया गया

और उनकी सम्पत्ति लूटकर ये दौलत हाथ आई थी। लूटे हुए समस्त सामान शेख मोहम्मद के अधिकार में होता था और मोहम्मद बिन सऊद भी उसकी अनुमति से ही कुछ ले पाता था। इन लूटे गये सामानों के बटवारे में अब्दुल वह्हाब की मनमानी वाली शैली थी। वह मुसलमानों के लूटे हुए इन सामानों को कभी दो या तीन व्यक्तियों को दे देता था।

एकेश्वरवाद के बारे में मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब का जो ग़लत विचार था उसे स्वीकार करने के लिए वह विभिन्न नगरों के लोगों को आमंत्रित करता था। जो उसके निमंत्रण को स्वीकार करता था उसकी जान माल सुरक्षित होती थी और जो उसके निमंत्रण को स्वीकार नहीं करता था उसे अब्दुल वह्हाब इस्लाम का शत्रु समझता था और उसकी हत्या कर देने एवं उसके धन को हड़प लेने को वैध समझता था। भ्रष्ठ विचार के वह्हाबी, नज्द में और नज्द से बाहर जैसे यमन, हेजाज़ और सीरिया तथा इराक़ के आस पास के क्षेत्रों में जो युद्ध करते थे उसका आधार उनके यही भ्रष्ठ विचार थे। युद्ध के माध्यम से जिस नगर पर भी वे अधिकार करते थे वहां की हर चीज़ उनके लिए वैध थी और यदि वे उसे अपने सम्पत्ति में शामिल कर सकते थे तो सम्मिलित करते थे अन्यथा उस नगर को लूटने पर ही संतोष करते थे। जो लोग मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब के विचारों से सहमत थे और उसके निमंत्रण को स्वीकार करते थे उन्हें चाहये कि वे उसकी

आज्ञा पालन का वचन दें और जो लोग उसके मुक़ाबले के लिए उठ खड़े होते थे उनकी हत्या कर दी जाती थी। इस तरीक़े से अहसा नगर के फ़ुसूल नाम के एक गांव के ३०० पुरुषों की हत्या कर दी गयी और उनकी सम्पत्ति को लूट लिया गया।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-3

हिंसा और निर्दयता में प्रसिद्ध सऊद इब्ने अब्दुल अज़ीज़ ने मक्के पर क़ब्ज़ा करने के दौरान सुन्नी समुदाय के बहुत से विद्वानों को अकारण ही मार डाला और मक्के के बहुत से प्रसिद्ध व प्रतिष्ठित लोगों को बिना किसी आरोप के फांसी पर चढ़ा दिया। प्रत्येक मुसलमान को, जो अपनी धार्मिक आस्थाओं पर डटा रहता है, विभिन्न प्रकार की यातनाओं द्वारा डराया जाता है और नगर-नगर और गांव-गांव में पुकार लगाने वाले भेजे जाते थे और वे ढ़िढोंरा पीट पीट कर लोगों से कहते थे कि हे लोगो सऊद के धर्म में प्रविष्ट हो जाओ और उसकी व्यापक छत्रछाया में शरण प्राप्त करो।

उस्मानी शासन के नौसेना प्रशिक्षण केन्द्र के एक उच्च अधिकारी अय्यूब सबूरी लिखते हैं कि अब्दुल अज़ीज़ इब्ने सऊद ने वहाबी क़बीलों के सरदारों की उपस्थिति में अपने पहले भाषण में कहा कि हमें सभी नगरों और समस्त आबादियों पर क़ब्ज़ा करना चाहिए। अपनी आस्थाओं और आदेशों को उन्हें

सिखाना चाहिए। हम अपनी इच्छाओं को व्यवहारिक करने के लिए सुन्नी समुदाय के उन धर्मगुरूओं का ज़मीन से सफाया करने पर विवश हैं जो सुन्नते नबवी और शरीअते मुहम्मदी अर्थात पैग़म्बरे इस्लाम के चरित्र तथा मत का अनुसरण करने का दावा करते हैं, विशेषकर प्रसिद्ध व जाने माने धर्मगुरूओं को तो बिल्कुल नहीं छोड़ेंगे क्योकि जब तक वे जीवित हैं, हमारे अनुयायी प्रसन्न नहीं हो पाएंगे। इस प्रकार से सबसे पहले उन लोगों का सफाया करना चाहिए जो स्वयं को धर्मगुरू के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

सऊद इब्ने अब्दुल अज़ीज़, मक्के का अतिग्रहण करने के बाद अरब उपमहाद्वीप के दूसरे महत्त्वपूर्ण नगरों पर क़ब्ज़े के प्रयास में रहा और इस बार उसने जद्दह पर आक्रमण किया। इब्ने बुशर जो स्वयं वहाबी है, तारीख़े नज्दी नामक पुस्तक में लिखता है कि सऊद, बीस दिनों से अधिक समय तक मक्के में रहा और उसके बाद वह जद्दह पर क़ब्ज़े के लिए मक्के से निकला। उसने जद्दह का परिवेष्टन किया किन्तु जद्दह के शासक ने बहुत से वहाबियों को तोप से उड़ा दिया और उन्हें भागने पर विवश कर दिया। इस पराजय के बाद वहाबी मक्के नहीं लौटे बल्कि वे अपनी मुख्य धरती अर्थात नज्द चले गये क्योकि उन्होंने सुना था कि ईरान की सेना ने नज्द पर आक्रमण कर दिया है। यह स्थिति मक्के को वहाबियों के हाथों से छुड़ाने का सुनहरा अवसर थी। मक्के के शासक शरीफ़ ग़ालिब ने, जो

वहाबियों के आक्रमण के बाद जद्दह भाग गया था, जद्दह के शासक के सहयोग से भारी संख्या में सैनिकों को मक्के भेजा। यह सैनिक तोप और गोलों से लैस थे और वहाबियों की छोटी सी सेना को पराजित करने और मक्के पर विजय प्राप्त करने में सफल रहे।

इसके बावजूद संसार के मुसलमानों के सबसे पवित्र स्थान मक्के पर क़ब्ज़े के लिए वहाबियों ने यथावत प्रयास जारी रखे। वर्ष 1804 में सऊद के आदेशानुसार जो वहाबियों का सबसे शक्तिशाली शासक समझा जाता है, पवित्र नगर मक्के का पुनः परिवेष्टन कर लिया गया। उसने मक्केवासियों पर बहुत अत्याचार किया यहां तक कि बहुत से मक्कावासी भूख और अकाल के कारण काल के गाल में समा गये।

सऊद के आदेशानुसार, मक्के के समस्त मार्गों को बंद कर दिया गया और जितने भी लोगों ने मक्के में शरण ले रखी थी, सबकी हत्या कर दी गयी। इतिहास में आया है कि मक्के में बहुत से बच्चे मारे गये और मक्के की गलियों में उनके शव कई दिनों तक पड़े रहे।

मक्के के शासक शरीफ़ ग़ालिब ने जिसके पास वहाबियों से संधि करने के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं था, वर्ष 1805 में वहाबियों से संधि कर ली। इतिहासकारों ने इस संदर्भ में लिखा कि मक्के के शासक ने भय के मारे वहाबियों के आदेशों का पालन किया। मक्के पर उनके वर्चस्व के समय वह उनके साथ बहुत ही अच्छा व्यवहार करता रहा और उसने वहाबी धर्मगुरूओं को बहुत ही मूल्यवान उपहार दिए ताकि अपनी और मक्केवासियों की जान की रक्षा करे।

वहाबियों द्वारा मक्के के पुनः अतिग्रहण के बाद उन्होंने चार वर्षों तक इराक़ी तीर्थयात्रियों के लिए, वर्तमान सीरिया अर्थात शामवासियों के लिए तीन वर्षों तक और मिस्र वासियों के लिए दो वर्षों तक के लिए हज के आध्यात्मिक व मानवीय संस्कारों पर रोक लगा दी।

मक्के पर अतिग्रहण के बाद सऊद ने पवित्र नगर मदीने पर क़ब्ज़ा करने के बारे में सोचा और इस पवित्र नगर का भी परिवेष्टन कर लिया किन्तु वहाबियों की भ्रष्ट आस्थाओं व हिंसाओं से अवगत, मदीनावासियों ने उनके मुक़ाबले में कड़ा प्रतिरोध किया। अंततः वर्ष 1806 में पवित्र नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। वहाबियों ने पैग़म्बरे इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही वसल्लम के रौज़े में मौजूद समस्त मूल्यवान चीज़ों को लूट लिया किन्तु समस्त मुसलमानों के विरोध के भय से

रसूले इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही व सल्लम के पवित्र रौज़े को ध्वस्त न कर सके। वहाबियों ने चार पेटियों में भरे हीरे और मूल्यवान रत्नों से बनी विभिन्न प्रकार की चीज़ों को लूट लिया। इसी प्रकार मूल्यवान ज़मुर्रद से बने चार शमादान को जिनमें मोमबत्ती के बदले रात में चमकने वाले और प्रकाशमयी हीरे रखे जाते थे, चुरा लिया। उन्होंने इसी प्रकार सौ तलवारों को भी चुरा लिया जिनका ग़ेलाफ़ शुद्ध सोने का बना हुआ था और जो याक़ूत और हीरे जैसे मूल्यवान पत्थरों से सुसज्जित थीं जिनका दस्ता ज़मुर्रद और ज़बरजद जैसे मूल्यवान पत्थरों का था। सऊद इब्ने अज़ीज़ ने मदीने पर क़ब्ज़ा करने के बाद समस्त मदीना वासियों को मस्जिदुन्नबी में एकत्रित किया और इस प्रकार से अपनी बातों को आरंभ किया। हे मदीनावासियों, आज हमने धर्म को तुम्हारे लिए परिपूर्ण कर दिया। तुम्हारे धर्म और क़ानून परिपूर्ण हो गये और तुम इस्लाम की विभूतियों से तृप्त हो गये, ईश्वर तुम से राज़ी व प्रसन्न हुआ, अब पूर्वजों के भ्रष्ट धर्मों को अपने से दूर कर दो और कभी भी उसे भलाई से न याद करो और पूर्वजों पर सलवात भेजने से बहुत बचो क्योंकि वे सबके सब अनेकेश्वरवादी विचारधरा अर्थात शिरक में मरे हैं।

सऊद ने अपनी सैन्य चढ़ाइयों में बहुत से लोगों का नरसंहार किया। उसकी और उस समय के वहाबी पंथ की भीषण हिंसाओं से अरब जनता और शासक भय से

कांपते थे। इस प्रकार से कि कोई मारे जाने के भय से हज या ज़ियारत के लिए मक्के और मदीने की यात्रा करने का साहस भी नहीं करता था। मक्के के शासक ने अपनी जान के भय से, सऊद की इच्छानुसार, मक्के और मदीने में पवित्र स्थलों और जन्नतुल बक़ीअ क़ब्रिस्तान को ध्वस्त करने का आदेश दिया। उसने हिजाज़ में वहाबी धर्म को औपचारिकता दी और जैसा कि वहाबी चाहते थे, अज़ान से पैग़म्बरे इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही व सल्लम पर सलवात भेजने को हटा दिया। अरब शासकों और हेजाज़ के प्रतिष्ठित लोगों ने जो इस पथभ्रष्ट पंथ की आस्थाओं और ज़ोरज़बरदस्तियों को सहन करने का साहस नहीं रखते थे, सबसे उच्चाधिकारी अर्थात उस्मानी शासक को पत्र लिखकर वहाबियों की दिन प्रतिदिन बढ़ती हुई शक्ति के ख़तरों से सचेत किया। उन्होंने बल दिया कि वहाबी पंथ केवल सऊदी अरब तक ही सीमित नहीं रहेगा बल्कि इसका इरादा समस्त मुसलमानों पर वर्चस्व जमाना और पूरे उस्मानी शासन पर क़ब्ज़ा करना है।

हेजाज़, यमन, मिस्र, फ़िलिस्तीन, सीरिया और इराक़ जैसी इस्लामी धरती पर शासन करने वाली उस्मानी सरकार ने मिस्र के शासक को वहाबियों से युद्ध करने का आदेश दिया। यह वही समय था जब सऊद 66 वर्ष की आयु में दिरइये नामक स्थान पर कैंसर में ग्रस्त होकर मर गया और उसका अब्दुल्लाह नामक पुत्र उसकी जगह बैठा।

उस्मानी सरकार की ओज़ से लैस मिस्र का शासक मुहम्मद अली पाशा वहाबियों को विभिन्न युद्धों में पराजित करने में सफल रहा और उसने वहाबियों के चंगुल से मक्के, मदीने और ताएफ़ को स्वतंत्र करा दिया। मिस्र के शासक ने इन युद्धों में वहाबियों के बहुत से कमान्डरों को गिरफ़्तार कर उस्मानी शासन की राजधानी इस्तांबोल भेज दिया। इस विजय के बाद मिस्र में जनता ने ख़ुशियां मनाई और विभिन्न समारोहों का आयोजन किया किन्तु वहाबियों की शैतानी अभी समाप्त नहीं हुई थी। मिस्र का शासक मुहम्मद अली पाशा ने समुद्री मार्ग से एक बार फिर अपनी सेना हेजाज़ भेजी। उसने मक्के को अपनी सैन्य छावनी बनाई और मक्के के शासक और उसके पुत्र को देश निकाला दे दिया और उनके माल को ज़ब्त कर लिया। उसके बाद वह मिस्र लौट आया और उसने अपनी ही जाति के इब्राहीम पाशा नामक व्यक्ति को लैस करके नज्द की ओर भेजा।

इब्राहीम पाशा ने वहाबियों के केन्द्र नज्द के दिरइये नगर का परिवेष्टन कर लिया। वहाबियों ने इब्राहीम पाशा के मुक़ाबले में कड़ा प्रतिरोध किया। तोप और गर्म हथियारों से लैस इब्राहीम पाशा ने दिरइये पर क़ब्ज़ा कर लिया और अब्दुल्लाह इब्ने सऊद को गिरफ़्तार कर लिया। अब्दुल्लाह इब्ने सऊद को उसके साथियों और निकटवर्तियों के साथ उस्मानी शासक के पास भेज दिया दिया गया। उस्मानी

शासक ने अब्दुल्लाह और उसके साथियों को बाज़ारों और नगरों में फिराने के बाद उन्हें मृत्युदंड दे दिया। अब्दुल्लाह इब्ने सऊद के मारे जाने के बाद तत्कालीन शसक आले सऊद और उसके बहुत से साथियों ने विभिन्न इस्लामी जगहों पर समारोहों का आयोजन किया और बहुत ख़ुशियां मनाई।

इब्राहीम पाशा लगभग नौ महीने तक दिरइये नगर में रहा और उसके बाद उसने इस नगर को वासियों से ख़ाली कराने का आदेश दिया और उसके बाद नगर को बर्बाद कर दिया। इब्राहीम पाशा ने मुहम्मद इब्ने अब्दुलवह्हाब और आले सऊद की जाति और उसके बहुत से पौत्रों को मरवा दिया या देश निकाला दे दिया ताकि फिर इस ख़तरनाक पंथ का नाम लेने वाला कोई न रहे। उसके बाद नज्द और हेजाज़ में उस्मानी शासक की सफलताओं का श्रेय मिस्र के शासक मुहम्मद अली पाशा को जाता है। इस प्रकार से 1818 में वहाबियों का दमन हुआ और उसके लगभग एक शताब्दी तक वहाबियों का नाम लेने वाला कोई नहीं था।

सऊदी अरब में नज्द की धरती पर मिस्रियों की चढ़ाई का बहुत ही उल्लेखनीय परिणाम निकला था। अब्दुल अज़ीज़ और उसके पुत्र सऊद का विस्तृत देश बिखर गया और बहुत से वहाबी मारे गये। वहाबी पंथ का निमंत्रण और लोगों पर इस

भ्रष्ट आस्था को थोपने का क्रम रूक गया और वहाबियों को लेकर लोगों के दिलों में जो भय था, वह समाप्त हो गया।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-4

जिन विषयों के बारे में वहहाबियों ने अत्यधिक हो हल्ला मचाया है उनमें से एक ईश्वर के प्रिय बंदों से तवस्सुल या अपने कार्यों के लिए उनके माध्यम से ईश्वर से सिफ़ारिश करवाना है। सलफ़ी, तवस्सुल को एकेश्वरवाद के विरुद्ध बताते हैं और उनका कहना है कि ऐसा करने वाला अनेकेश्वरवादी है। अलबत्ता यह भी इस कट्टरपंथी मत की वैचारिक पथभ्रष्टताओं में से एक है क्योंकि क़ुरआने मजीद की आयतों और पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के कथनों का तनिक भी ज्ञान रखने वाला हर समझदार व्यक्ति जानता है कि तवस्सुल न केवल यह कि एकेश्वरवाद से विरोधाभास नहीं रखता बल्कि यह अनन्य ईश्वर से निकट होने का माध्यम है और इसी कारण मुसलमान पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वर के अन्य प्रिय बंदों से तवस्सुल करते हैं ताकि कृपाशील उनके महान स्थान के वास्ते से उन पर कृपा दृष्टि डाले और उनकी प्रार्थनाओं को स्वीकार करे।

हर मुसलमान जानता है कि ईश्वर अनन्य है और वही विश्व की सभी वस्तुओं का स्रोत और हर घटना का मूल आधार है। इसी प्रकार ब्रह्मांड की समस्त वस्तुएं केवल ईश्वर की इच्छा और अनुमति से ही प्रभाव स्वीकार करती हैं। क़ुरआने मजीद ने अपनी रोचक शैली में बड़े ही सुंदर ढंग से इस बात को बयान किया है। सूरए अनफ़ाल की सत्रहवीं आयत में वह पैग़म्बरे इस्लाम को संबोधित करते हुए

कहता हैः याद कीजिए उस समय को जब आपने (युद्ध में) तीर चलाया, तो वस्तुतः आपने नहीं बल्कि ईश्वर ने तीर चलाया। इस आयत में पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम द्वारा तीर चलाए जाने का मुख्य कारक ईश्वर को बताया गया है। अर्थात तीर पैग़म्बर ने भी चलाया और ईश्वर ने। यह आयत सभी को यह बताना चाहती है कि हर कार्य का मुख्य कारक ईश्वर है और सभी बातें व घटनाएं उसी की इच्छा से होती हैं तथा इस आयत में पैग़म्बर उस कार्य अर्थात तीर चलाने का माध्यम हैं।

उदाहरण स्वरूप मनुष्य क़लम द्वारा कोई बात लिखे तो क़लम इस बात का माध्यम होता है कि मनुष्य उसके द्वारा लिखने का काम करे। अब प्रश्न यह है कि क्या लिखने के समय मनुष्य और क़लम दोनों का रुतबा और स्थान एक ही है? खेद के साथ कहना पड़ता है कि वहहाबी मत के लोग तवस्सुल के संबंध में भी शेफ़ाअत की ही भांति भ्रांति व पथभ्रष्टता का शिकार हो गए हैं और माध्यम व अनन्य ईश्वर को एक ही समझ बैठे हैं। इसी आधार पर उन्होंने मुसलमानों को काफ़िर एवं अनेकेश्वरवादी बताया है जबकि तवस्सुल, पैग़म्बरों को ईश्वर का समकक्ष बताने नहीं अपित पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम जैसे पवित्र लोगों को अनन्य ईश्वर के समक्ष अपनी प्रार्थनाओं की स्वीकृति के लिए माध्यम बनाने को कहते हैं।

ईश्वर का सामिप्य, बंदगी के मार्ग में मनुष्य के लिए सबसे उच्च एवं सम्मानीय दर्जा है। क़ुरआने मजीद ने सूरए माएदा की 35वीं आयत में स्पष्ट रूप से कहा है कि माध्यम व साधन के बिना ईश्वर का सामिप्य प्राप्त नहीं किया जा सकता है। वह कहता है। हे ईमान वालो! ईश्वर (के आदेश के विरोध) से डरो और (उससे सामिप्य के लिए) साधन जुटाओ तथा उसके मार्ग में जेहाद करते रहो कि शायद तुम्हें मोक्ष प्राप्त हो जाए। इस आयत में, जिसके संबोधन के पात्र ईमान वाले हैं, मोक्ष व कल्याण के लिए तीन विशेष आदेश दिए गए हैं। ये तीन आदेश हैं, ईश्वर से भय, ईश्वर से सामिप्य के लिए साधन जुटाना और ईश्वर के मार्ग में जेहाद करना। अब प्रश्न यह है कि इस आयत में साधन से तात्पर्य क्या है? इस आयत में साधन का अर्थ अत्यंत व्यापक है किंतु हर स्थिति में कोई वस्तु या व्यक्ति होना चाहिए जो प्रेम व उत्साह के साथ ईश्वर से सामिप्य का कारण बने। ईश्वर तथा उसके पैग़म्बर पर ईमान, जेहाद तथा नमाज़, ज़कात, रोज़ा व हज जैसी उपासनाएं तथा दान दक्षिणा व परिजनों से मेल-जोल जैसी बातें भी ईश्वर से सामिप्य का कारण हो सकती हैं। पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम, उनके उत्तराधिकारियों तथा ईश्वर के प्रिय बंदों से तवस्सुल भी इन्हीं उपासनाओं की भांति है और क़ुरआने मजीद की आयतों के अनुसार वह भी ईश्वर से सामिप्य का कारण बनता है।

क़ुरआने मजीद की कुछ आयतों में कहा गया है कि पैग़म्बर भी ईश्वर के बंदों पर कृपा करते हैं। सूरए तौबा की 59वीं आयत में कहा गया है। और यदि जो कुछ ईश्वर और उसके पैग़म्बर ने उन्हें प्रदान किया है उस पर वे प्रसन्न रहते और कहते कि ईश्वर हमारे लिए काफ़ी है, ईश्वर और उसके पैग़म्बर शीघ्र ही अपनी कृपा से हमें प्रदान करेंगे और हम ईश्वर की ओर से आशावान हैं (तो निश्चित रूप से यह उनके लिए बेहतर होता)। जब स्वयं क़ुरआन ने पैग़म्बर को प्रदान करने वाला बताया है तो फिर हम उनसे सहायता क्यों न चाहें और उनके उच्च स्थान को ईश्वर के समक्ष माध्यम क्यों न बनाएं? यही कारण है कि दयालु व कृपालु ईश्वर सूरए निसा की 64वीं आयत में मुसलमानों को पैग़म्बरे इस्लाम से सिफ़ारिश करवाने और उन्हें माध्यम बनाने हेतु प्रोत्साहित करता है। इस आयत में पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम को संबोधित करते हुए कहा गया हैः और जब उन्होंने अपने आप पर अत्याचार किया और ईश्वरीय आदेश की अवज्ञा की थी तो यदि वे आपके पास आते और ईश्वर से क्षमा याचना करते और पैग़म्बर भी उन्हें क्षमा करने की सिफ़ारिश करते तो निसंदेह वे ईश्वर को बड़ा तौबा स्वीकार करने वाला और दयावान पाते।

वहहाबी मत के लोगों ने तवस्सुल का इन्कार करने के लिए कुरआने मजीद की कुछ आयतों को प्रमाण में प्रस्तुत किया है। उदाहरण स्वरूप वे सूरए फ़ातिर की 14वीं आयत को प्रस्तुत करते हैं जिसमें कहा गया हैः (हे पैग़म्बर!) यदि आप उन्हें पुकारें तो वे आपकी पुकार नहीं सुनेंगे और यदि वे सुनें भी तो आपकी बात स्वीकार नहीं करेंगे और प्रलय के दिन वे आपके समकक्ष ठहराने (और उपासना) का इन्कार कर देंगे। और (जानकार ईश्वर की) भांति कोई भी आपको (तथ्यों से) सूचित नहीं करता। सूरए फ़ातिर में मूर्तियों की पूजा करने वालों को संबोधित करती हुई कई आयतें हैं और यह आयत भी उन्हें मूर्तियों की पूजा से रोकती है क्योंकि मूर्तियां न तो अपनी उपासना करने वालों की प्रार्थनाएं सुन सकती हैं और यदि सुन भी सकतीं तो उन्हें पूरा करने का उनमें सामर्थ्य नहीं है और न ही संसार में उनका तनिक भी कोई स्वामित्व है किंतु कुछ अतिवादी वहहाबियों ने तवस्सुल व शेफ़ाअत के माध्यम से पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम तथा ईश्वर के अन्य प्रिय बंदों से मुसलमानों के संपर्क को समाप्त करने के लिए इस आयत और इसी प्रकार की अन्य आयतों का सहारा लिया है और कहा है कि ईश्वर को छोड़ कर पैग़म्बरों सहित वे सभी लोग, जिन्हें तुम पकारते हो, तुम्हारी बात नहीं सुनते हैं और यदि सुन भी लें तो उसे पूरा नहीं कर सकते। या इसी प्रकार सूरै आराफ़ की आयत क्रमांक 197 में कहा गया हैः और जिन्हें तुम ईश्वर के स्थान पर पुकारते हो वे न तो तुम्हारी सहायता कर सकते हैं और न ही

अपनी रक्षा कर सकते हैं। वह्हाबी इसी प्रकार की अन्य आयतें प्रस्तुत करके पैग़म्बरों और इमामों से हर प्रकार के तवस्सुल का इन्कार कर देते हैं और इसे एकेश्वरवाद के विपरीत बताते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि इन आयतों से पहले और बाद वाली आयतों पर एक साधारण सी दृष्टि डाल कर भी इस वास्तविकता को समझा जा सकता है कि इन आयतों का तात्पर्य मूर्तियां हैं क्योंकि इन सभी आयों में उन पत्थरों और लकड़ियों की बात की गई है जिन्हें ईश्वर का समकक्ष ठहराया गया था और उन्हें ईश्वर की शक्ति के मुक़ाबले में प्रस्तुत किया गया था।

कौन है जो यह न जानता हो कि पैग़म्बर और ईश्वर के प्रिय बंदे ईश्वर के मार्ग में शहीद होने वाले उन लोगों की भांति हैं जिनके बारे में क़ुरआन स्पष्ट रूप से कहता है कि वे जीवित हैं। दूसरी ओर इस बात में भी कोई संदेह नहीं है कि इन पवित्र हस्तियों से तवस्सुल का अर्थ यह नहीं है कि हम इन्हें ईश्वर के मुक़ाबले में स्वाधीन शक्ति का स्वामी समझते हैं बल्कि लक्ष्य है कि उनके सम्मान और स्थान के माध्यम से ईश्वर से सहायता चाहें और ईश्वर की दृष्टि में उनकी जो महानता है उसके द्वारा ईश्वर से यह चाहें कि वह हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर ले और यह बात एकेश्वरवाद और ईश्वर की बंदगी से तनिक भी विरोधाभास नहीं रखती बल्कि यही एकेश्वरवाद है। इस आधार पर जैसा कि

क़ुरआने मजीद ने सूरए बक़रह की आयत क्रमांक 255 में सिफ़ारिश के संबंध में स्पष्ट रूप से कहा है कि कोई भी ईश्वर की अनुमति और आदेश के बिना सिफ़ारिश नहीं कर सकता, ठीक उसी प्रकार उनसे तवस्सुल भी इसी माध्यम से होता है और ईश्वर की अनुमति के बिना नहीं हो सकता। यही कारण है कि ईश्वर अपने पैग़म्बर के माध्यम से एक कथन में कहता है कि जान लो कि जिस किसी की कोई समस्या है और वह उसे दूर करना तथा कोई लाभ प्राप्त करना चाहता है या किसी अत्यंत जटिल व हानिकारक घटना में ग्रस्त हो गया है और चाहता है कि वह समाप्त हो जाए तो उसे चाहिए कि मुझे मुहम्मद व उनके पवित्र परिजनों के माध्यम से पुकारे ताकि मैं उसकी प्रार्थनाओं को उत्तम ढंग से स्वीकार करूं।

यही कारण है कि हम पैग़म्बरे इस्लाम के काल के वरिष्ठ मुसलमानों तथा अन्य धार्मिक नेताओं की जीवनी में देखते हैं कि वे समस्याओं के समय पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की क़ब्र पर जाते, उनसे तवस्सुल करते तथा उनकी पवित्र आत्मा के माध्यम से ईश्वर से सहायता चाहते थे। इस संबंध में बहुत सी हदीसें हैं जिन्हें शीया और सुन्नी दोनों की विश्वस्त किताबों में देखा जा सकता है। इब्ने हजरे मक्की ने अपनी किताब सवाएक़े मुहरिक़ा में प्रख्यात सुन्नी धर्मगुरू इमाम शाफ़ेई के हवाले से लिखा कि वे पैग़म्बरे इस्लाम के परिजनों की प्रशंसा में कविजाएं लिख कर उनसे तवस्सुल करते थे और कहते थे

कि पैग़म्बर के परिजन मेरे माध्यम हैं, वे ईश्वर से सामिप्य के लिए मेरा साधन हैं, मुझे आशा है कि प्रलय के दिन उन्हीं के कारण मेरा कर्मपत्र मेरे सीधे हाथ में दिया जाएगा और मुझे मोक्ष प्राप्त होगा।

तवस्सुल की एक अन्य घटना पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की पत्नी हज़रत आएशा से संबंधित है। अबुल जोज़ा के हवाले से दारमी ने अपनी पुस्तक सहीह में लिखा कि एक वर्ष मदीना नगर में भारी अकाल पड़ा। हज़रत आएशा ने लोगों से कहा कि वे अकाल की समाप्ति के लिए पैग़म्बरे इस्लाम से तवस्सुल करें। उन्होंने ऐसा ही किया और फिर जम कर वर्षा हुई तथा अकाल समाप्त हो गया। सुन्नी मुसलमानों की सबसे विश्वस्त किताब सहीह बुख़ारी में वर्णित है कि दूसरे ख़लीफ़ा उमर ने अकाल व सूखे के समय पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के चाचा अब्बास से तवस्सुल किया और कहा कि प्रभुवर! जब भी हम अकाल में ग्रस्त होते थे तो पैग़म्बरे इस्लाम से तवस्सुल किया करते थे और वर्षा होने लगती थी अब मैं तुझे उनके चाचा अब्बास का वास्ता देता हूं ताकि तू वर्षा को भेज दे। बुख़ारी ने लिखा है कि इसके बाद वर्षा होने लगी। सुन्नियों के एक बड़े धर्मगुरू आलूसी ने क़ुरआने मजीद की व्याख्या में लिखी गई अपनी किताब में तवस्सुल के संबंध में बड़ी संख्या में हदीसों का वर्णन किया है। वे इन हदीसों की लम्बी व्याख्या और तवस्सुल से

संबंधित हदीसों के बारे में कड़ा रुख़ अपनाने के बाद अंत में कहते हैं कि इन सारी बातों के बावजूद मेरी दृष्टि में ईश्वर के निकट पैग़म्बरे इस्लाम से तवस्सुल में किसी प्रकार की कोई रुकावट नहीं है, चाहे उनके जीवन में हो अथवा मृत्यु के पश्चात। इसके बाद आलूसी ने यह भी लिखा है कि ईश्वर को पैग़म्बर के अतिरिक्त भी किसी अन्य का वास्ता देने में कोई रुकावट नहीं है किंतु उसकी शर्त यह है कि वह वास्तव में ईश्वर के निकट उच्च स्थान रखता हो।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-5

वहाबियत की आधारशिला रखने वाले इब्ने तैमिया ने अपने पूरे जीवन में बहुत सी किताबें लिखीं और अपनी आस्थाओं का अपनी रचनाओं में उल्लेख किया है। उन्होंने ऐसे अनेक फ़त्वे दिए जो उनसे पहले के किसी भी मुसलमान धर्मगुरु ने नहीं दिए थे विशेष रूप से ईश्वर के बारे में। वह्हाबियों का मानना है कि ईश्वर वैसा ही है जैसा कि क़ुरआन की कुछ आयतों में उल्लेख है हालांकि ऐसी आयतों की क़ुरआन की दूसरी आयतें व्याख्या करती हैं और पैग़म्बरे इस्लाम व उनके पवित्र परिजनों के कथनों से भी ऐसी आयतों की तार्कपूर्ण व्याख्या की गयी है। किन्तु इब्ने तैमिया और दूसरे सलफ़ी क़ुरआन की आयतों की विवेचना व स्पष्टीकरण से दूर रहे और इस प्रकार ईश्वर के अंग तथा उसके लिए सीमा को मानने लगे।

इब्ने तैमिया और उनके प्रसिद्ध शिष्य इब्ने क़य्यिम जौज़ी ने अपनी किताबों में इस बिन्दु पर बल दिया है कि ईश्वर सृष्टि की रचना करने से पूर्व ऐसे घने बादलों के बीच में था कि जिसके ऊपर और न ही नीचे हवा थी, संसार में कोई भी वस्तु मौजूद नहीं थी और ईश्वर का अर्श अर्थात ईश्वर की परम सत्ता का प्रतीक विशेष स्थान पानी के ऊपर था।

इस बात में ही विरोधाभास मौजूद है। क्योंकि एक ओर यह कहा जा रहा है कि ईश्वर इससे पहले कि किसी चीज़ को पैदा करता, घने बादलों के बीच में था जबकि बादल स्वयं ईश्वर की रचना है। इसलिए यह कैसे माना जा सकता है कि रचना अर्थात बादल रचनाकार से पहले सृष्टि में मौजूद रहा है? क्या इस्लामी शिक्षाओं से अवगत एक मुसलमान इस बात को मानेगा कि महान ईश्वर को ऐसे अस्तित्व की संज्ञा दी जाए जो ऐसा बेबस हो कि घने बादलों में घिरा हो और बादल उस परम व अनन्य अस्तित्व का परिवेष्टन किए हो? इस्लाम के अनुसार कोई भी वस्तु ईश्वर पर वर्चस्व नहीं जमा सकती क्योंकि क़ुरआनी आयतों के अनुसार ईश्वर का हर वस्तु पर प्रभुत्व है और पूरी सृष्टि उसके नियंत्रण में है। इब्ने तैमिया के विचारों का इस्लामी शिक्षाओं से विरोधाभास पूर्णतः स्पष्ट है।

वहहाबियों की आस्थाओं में एक आस्था यह भी है कि ईश्वर किसी विशेष दिशा व स्थान में है। वहहाबियों का मानना है कि ईश्वर का शरीर होने के अतिरिक्त उसकी व्यवहारिक विशेषता भी है और शारीरिक तथा बाह्य दृष्टि से भी आसमानों के ऊपर है। इबने तैमिया ने अपनी किताब मिन्हाजुस्सुन्नह में इस विषय का इस प्रकार उल्लेख किया हैः हवा, ज़मीन के ऊपर है, बादल हवा के ऊपर है, आकाश, बादलों व धरती के ऊपर हैं और ईश्वर की सत्ता का प्रतीक अर्श आकाशों के ऊपर है और ईश्वर इन सबके ऊपर है। इसी प्रकार वे पूर्वाग्रह के साथ कहते हैः जो लोग यह मानते हैं कि ईश्वर दिखाई देगा किन्तु ईश्वर के लिए दिशा को सही नहीं मानते उनकी बात बुद्धि की दृष्टि से अस्वीकार्य है।

प्रश्न यह उठता है कि इब्ने तैमिया का यह दृष्टिकोण क्या पवित्र क़ुरआन के सूरए बक़रा की आयत क्रमांक पंद्रह से स्पष्ट रूप से विरोध नहीं रखता कि जिसमें ईश्वर कह रहा हैः पूरब पश्चिम ईश्वर का है तो जिस ओर चेहरा घुमाओगे ईश्वर वहां है। ईश्वर हर चीज़ पर छाया हुया व सर्वज्ञ है। और इसी प्रकार सूरए हदीद की आयत क्रमांक चार में ईश्वर कह रहा हैः जहां भी हो वह तुम्हारे साथ है।

अब सूरए सजदा की इस आयत पर ध्यान दीजिएः और फिर उसका संचालन अपने हाथ में लिया और उससे हटकर न तो कोई तुम्हारा संरक्षक है और न ही उसके मुक़ाबले में कोई सिफ़ारिश करने वाला है।

सूरए हदीद की आयत क्रमांक 4 में ईश्वर कह रहा हैः फिर सृष्टि का संचालन संभाला और जो कुछ ज़मीन में प्रविष्ट होता है वह उसे जानता है।

और अब सूरए ताहा की आयत क्रमांक 5 पर ध्यान दीजिएः वही दयावान जिसके पास पूरी सृष्टि की सत्ता है।

वह्हाबियों ने इन आयतों के विदित रूप के आधार पर ईश्वर की सत्ता के प्रतीक के लिए विशेष रूप व आकार को गढ़ लिया है कि जिसे सुन कर हंसी आती है। वह्हाबियों का मानना है कि ईश्वर का भार बहुत अधिक है और वह अर्श पर बैठा है। इब्ने तैमिया ने कि जिसका सलफ़ी अनुसरण करते हैं, अनेक किताबों में लिखा है कि ईश्वर अपने आकार की तुलना में अर्श के हर ओर से अपनी चार अंगुली से अधिक बड़ा है। इब्ने तैमिया कहते हैः पवित्र ईश्वर अर्श के ऊपर है और उसका अर्श गुंबद जैसा है जो आकाशों के ऊपर स्थित है और अर्श ईश्वर के अधिक भारी

होने के कारण ऊंट की काठी की भांति चरमराता है जो चरमराहट भारी सवार के कारण होती है।

इब्ने क़य्यिम जौज़ी ने जो इब्ने तैमिया के शिष्य व उनके विचारों के प्रचारक तथा मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब के पौत्र भी हैं, अपनी किताबों में ईश्वर का इस प्रकार उल्लेख किया है कि सुनने वाले को उसके बचपन की कलपनाएं याद आ जाती हैं। वे कहते हैः ईश्वर का अर्श कि जिसकी मोटाई दो आकाशों के बीच की दूरी जितनी है, आठ ऐसे पहाड़ी बकरों की पीठ पर टिका हुआ है कि जिनके पैर के नाख़ुन से घुटने तक की दूरी भी दो आकाशों के बीच की दूरी के बराबर है। ये पहाड़ी बकरे एक समुद्र के ऊपर खड़े हैं कि जिसकी गहराई दो आकाशों के बीच की दूरी के बराबर है और समुद्र सातवें आकाश पर स्थित है। ये बातें ऐसी स्थिति में हैं कि न तो पवित्र क़ुरआन की आयतें, न पैग़म्बरे इस्लाम और न ही उनके सदाचारी साथियों ने इस प्रकार की निराधार व अतार्किक विशेषताओं का उल्लेख किया है बल्कि उनका तो मानना है कि ईश्वर कैसा है इसका उल्लेख करना भी असंभव है।

हर चीज़ से ईश्वर के आवश्यकतामुक्त होने की आस्था धर्म व पवित्र क़ुरआन की महत्वपूर्ण शिक्षाओं में है और पवित्र क़ुरआन की अनेक आयतों में इस विषय

पर चर्चा की गयी है। जैसा कि पवित्र क़ुरआन के सूरए बक़रा की आयत क्रमांक 263 में ईश्वर कह रहा हैः ईश्वर आवश्यकतामुक्त और सहनशील है। इसी प्रकार सूरए बक़रा की आयत क्रमांक 267 में हम पढ़ते हैः ईश्वर आवश्यकतामुक्त है और सारी प्रशंसा उसी से विशेष है।

पवित्र क़ुरआन की इन आयतों में इस प्रकार के अर्थ को केवल चिंतन मनन द्वारा ही समझा जा सकता है। पवित्र क़ुरआन मानव समाज को निरंतर तर्क का निमंत्रण देता है और दावा करने वालों से कह रहा है कि यदि उनके पास अपनी बात की सत्यता का कोई तर्क है तो उसे बयान करे।

उदाहरण स्वरूप तर्क की दृष्टि से यह कैसे माना जा सकता है कि ईश्वर आठ पहाड़ी बकरों पर सवार है। क्योंकि यदि ईश्वर वास्तव में आठ बकरों पर सवार होगा तो उसे उनकी आवश्यकता होगी। जबकि अनन्य ईश्वर पवित्र है इस त्रुटि से कि उसे किसी चीज़ की आवश्यकता पड़े। इसी प्रकार इस भ्रष्ट विचार के आधार पर कि ईश्वर का अर्श आठ बकरों पर है, यह निष्कर्ष निकलेगा कि ये आठ बकरे भी जब से ईश्वर है और जब तक रहेगा, मौजूद रहेंगी। जबकि ईश्वर सूरए हदीद की चौथी आयत में स्वयं को हर चीज़ से पहले और हर चीज़ के बाद बाक़ी रहने वाला अस्तित्व कह रहा है और सलफ़ियों के आठ बकरों सहित दूसरी कहानियों से

संबंधित किसी बात का उल्लेख नहीं है। पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल लाहै अलैहे व आलेही व सल्लम ईश्वर की विशेषता के संबंध में कहते हैः तू हर चीज़ से पहले था और तुझसे पहले कोई वस्तु नहीं थी और तू सबके बाद भी है।

अर्श पर ईश्वर के होने का अर्थ ईश्वर की सत्ता है जो पूरी सृष्टि पर छायी हुयी है और पूरे संसार का संचालन उसके हाथ में है। अर्श से तात्पर्य यह है कि ईश्वर का पूरी सृष्टि पर नियंत्रण है और हर वस्तु पर उसका शासन है जो अनन्य ईश्वर के अभिमान के अनुरूप है। इसलिए अर्श पर ईश्वर के होने का अर्थ सभी वस्तुओं चाहे आकाश में हों या ज़मीन में चाहे छोटी हों चाहे बड़ी चाहे महत्वपूर्ण और चाहे नगण्य हों सबका संचालन उसके हाथ में है। परिणामस्वरूप ईश्वर हर चीज़ का पालनहार और इस दृष्टि से वह अकेला है। रब्ब से अभिप्राय पालनहार और संचालक के सिवा कोई और अर्थ नहीं है किन्तु सलफ़ी ईश्वर के अर्श की जो विशेषता बयान करते हैं वह न केवल यह कि धार्मिक मानदंडों व बुद्धि से विरोधाभास रखता है बल्कि उसे बकवास के सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता। सलफ़ी इसी प्रकार ईश्वर के अर्श से ऐसे खंबे अभिप्राय लेते हैं कि यदि उनमें से एक न हो तो ईश्वर का अर्श ढह जाएगा और ईश्वर उससे ज़मीन पर गिर पड़ेगा। हज़रत अली अलैहिस्सलाम जिन्हें पैग़म्बरे इस्लाम ने अपने ज्ञान के नगर का

द्वार कहा है, ईश्वर के अर्श की व्याख्या इन शब्दों में करते हैः ईश्वर ने अर्श को अपनी सत्ता के प्रतीक के रूप में बनाया है न कि अपने लिए कोई स्थान।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-6

वहाबी समुदाय का वैचारिक संस्थापक इब्ने तैमिया एकेश्वरवाद के संबंध में विभिन्न आस्था रखता है जो कभी तो मुसलमानों की आस्थाओं से भिन्न होती है और कभी विरोधाभास रखती है। ईश्वर के बारे में उसके विचारों में से एक उसने ईश्वर को धरती के अन्य जीवों की भांति चलता फिरता और गतिशील बताया है और उसका मानना है कि ईश्वर एक स्थान से दूसरे स्थान चलता रहता है। आसमान से उतरना और चढ़ना और आकाश पर चलना तथा विभिन्न प्रकार के सिहांसनों पर बैठना, अनन्य ईश्वर के बारे में इब्ने तैमिया की रोचक बातों में से है। इब्ने तैमिया मिनहाजुस्सुन्ना नामक पुस्तक में लिखता है कि ईश्वर हर रात में आकाश से ज़मीन पर उतरता है और अरफ़े की रात में धरती से बहुत निकट हो जाता है ताकि अपने बंदों की आवाज़ सुने और निकट से उसे स्वीकार करे। ईश्वर पहले आसमान पर आकर पुकारता है कि कोई है जो मुझे पुकारे और मैं उसकी दुआओं को स्वीकार करूं।

वहाबी समुदाय के आधार पर इसी प्रकार ईश्वर के लिए विभिन्न अवसरों पर भिन्न सिंहासनों व कुर्सियों को दृष्टिगत रखा गया है। मजमूउल फ़तावा नाम पुस्तक में इब्ने तैमिया के प्रसिद्ध शिष्य इब्ने क़ैय्यिम जौज़ी के हवाले से बयान हुआ है कि हर आसमान पर ईश्वर के लिए एक सिंहासन है, जब वह पहले आसमान पर उतरता है तो उस आसमान के विशेष सिंहासन पर बैठता है और कहता है कि है कोई प्रायश्चित करने वाला ताकि उसको मैं क्षमा करूं। वह सुबह तक वहां रहता है और सुबह के समय पहले आसमान के विशेष सिंहासन को छोड़ देता है, ऊपर जाता है और दूसरी कुर्सी पर बैठता है।

मोरक्को के प्रसिद्ध पर्यटक इब्ने बतूता अपने यात्रा वृतांत में इस संबंध में वहाबी धर्म गुरुओं की ओर से रोचक कथा बयान करते हैं, वे लिखते हैं कि मैंने दमिश्क़ की जामे मस्जिद में इब्ने तैमिया को देखा जो लोगों को उपदेश दे रहा था और कह रहा था कि ईश्वर पहले आसमान पर उतरता है, जैसा कि मैं अभी नीचे उतरूंगा, फिर वह मिंबर अर्थात भाषण देने के विशेष स्थान से एक सीढ़ी नीचे उतरा। इब्ने तैमिया की इस बात पर वहां उपस्थित मालिकी पंथ के प्रसिद्ध धर्मशास्त्री इब्ने ज़ोहरा ने कड़ा विरोध किया किन्तु कुछ साधारण लोग जो इब्ने तैमिया की बातों पर विश्वास कर चुके थे, मिंबर के नीचे से उठे और इब्ने ज़ोहरा की पिटाई करने लगे। उनको हंबली न्यायाधीश की ओर से भी डांट फटकार लगाई

गयी किन्तु हंबली न्यायधीश का क्रियाकलाप दमिश्क़ के शाफ़ई और मालेकी न्यायधीशों और धर्मशास्त्रियों के कड़े विरोध का कारण बना। इस आधार पर इस विषय की सूचना शासक को दी गयी और उसने भी इब्ने तैमिया को जेल में डाल देने का आदेश जारी कर दिया।

वास्तव में इब्ने तैमिया ईश्वर के लिए चलने फिरने की बात को मानते हुए भौतिक जीवों की भांति ईश्वर को भी आवश्यकता रखने वाला समझता है जो अपने बंदों से संपर्क बनाने के लिए आसमान से उतरता और चढ़ता है। यह ऐसी स्थिति में है कि गति भौतिक संसार से विशेष होती है और सर्वसमर्थ ईश्वर को अपने बंदों की बातें सुनने और उनकी दुआओं को पूरा करने के लिए इधर उधर जाने और विभिन्न सिंहासनों पर बैठने की आवश्यकता नहीं होती। सूरए क़ाफ़ की आयत क्रमांक सोलह में बल दिया गया है कि ईश्वर बंदे की गर्दन की रग से भी निकट है और सूरए बक़रह की आयत क्रमांक 115 में कहा गया है कि और अल्लाह के लिए पूरब भी है और पश्चिम भी इसीलिए तुम जिधर भी रुख़ करोगे वहीं ईश्वर मौजूद है वह छाया हुआ भी है और ज्ञानी भी है। इस आधार पर यह परिणाम निकाला जा सकता है कि ईश्वर हर स्थान पर मौजूद है और उसे सुनने और हर कार्य के लिए इधर उधर जाने की आवश्यकता नहीं है। यह उपस्थिति सर्वसमर्थ ईश्वर की उसी शक्ति और ज्ञान से उत्पन्न हुई है जिसके बारे में पवित्र

क़ुरआन ने बारम्बार बल दिया है। उदाहरण स्वरूप सूरए बक़रह की आयत क्रमांक 284 में आया है कि ईश्वर समस्त वस्तुओं पर सक्षम है। वास्तव में क्षमता और ज्ञान ईश्वर की प्रसिद्ध विशेषताओं में है जिसे पवित्र क़ुरआन में क़ादिर, आलिम, क़दीर व अलीम जैसे शब्दों के साथ बारम्बार प्रस्तुत किया गया है। इस दशा में इब्ने तैमिया से पूछना चाहिए कि क्या वास्तव में संसार का रचयिता भौतिक जीवों की भांति अपने बंदों से संपर्क बनाता है या यह संपर्क, बिना शब्द के मनुष्य के हृदय और आत्मा द्वारा होता है?

इब्ने तैमिया ने अपने मन में ईश्वर के लिए एक सिंहासन या गद्दी की कल्पना कर ली है और उसका यहां तक मानना है कि पैग़म्बरे इस्लाम अपने रचयिता के बग़ल में एक कुर्सी पर विराजमान होंगे जबकि पैग़म्बरे इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही व सल्लम अपनी समस्त शान और वैभव के बावजूद स्वयं को ईश्वर का एक निचले दर्जे का बंदा कहने पर गर्व करते हैं और पवित्र क़ुरआन भी सूरए कहफ़ की आयत क्रमांक 110 में पैग़म्बरे इस्लाम (स) को संबोधित करते हुए कहता है कि आप कह दीजिए के मैं तुम्हारे ही जैसा एक मनुष्य हुं किन्तु मेरी ओर ईश्वर का विशेष संदेश वहि आता है कि तुम्हारा ईश्वर एक अकेला है इसीलिए जो भी उससे भेंट की आशा लगाए हुए है उसे चाहिए कि भला कर्म करे और किसी को अपने ईश्वर की उपासना में भागीदार न बनाए।

इब्ने तैमिया और उसका शिष्य इब्ने क़ैय्यिम जौज़ी इन सब बातों से भी आगे बढ़ गये और उन्होंने अपनी पुस्तकों में ईश्वर को एक नरेश की भांति बताया। मजमूउल फ़तावा नामक पुस्तक में इनके हवाले से आया है कि परलोक के दिनों में शुक्रवार के दिन ईश्वर अपनी शक्ति के विशेष स्थान अर्थात अर्श से नीचे उतरेगा और सिंहासन पर बैठेगा। ईश्वर का सिंहासन प्रकाशमयी मिंबरों के बीच होगा और ईश्वरीय दूत इन मिंबरों पर बैठ हुए होंगे। सोने के बने सिंहासन इन मिंबरों को घेरे हुए होंगे और शहीद और ईश्वर के सच्चे बंदे इस पर बैठे हुए होंगे। ईश्वर बैठक के आयोजन और सभा में उपस्थित लोगों से विस्तृत बात चीत करके सिंहासन से उठेगा और बैठक को छोड़कर अपने विशेष स्थान अर्श की ओर ऊपर रवाना हो जाएगा।

यह बात रोचक है कि वहाबी इस प्रकार की अस्पष्ट और निराधार बातों को बिना किसी आयत या हदीस के प्रमाण के प्रस्तुत करते हैं और विदित रूप से केवल अपनी कल्पनाओं के ताने बाने बुनते रहते हैं। न तो पवित्र क़ुरआन में और न ही सहाए सित्ता जैसी सुन्नियों की मान्यता प्राप्त पुस्तकों में इस प्रकार की बातें प्रस्तुत की गयी हैं। इस बारे में केवल यह कहा जा सकता है कि ईश्वर के बारे में इस प्रकार की अवास्तविक बातें इब्ने तैमिया और उसके अनुयाइयों के मस्तिष्क

की उपज है। उन्होंने ईश्वर को बंदों की भांति बताने और उसके लिए शरीर की बात मानकर ईश्वर के श्रेष्ठ व उच्च स्थान को घटा दिया है। सुन्नी समुदाय के प्रसिद्ध धर्मगुरू इब्ने जोहबुल का कहना है कि इब्ने तैमिया जिस प्रकार से दावा करता है कि यह बात ईश्वर, उसके दूतों और ईश्वरीय दूतों के साथियों ने कही है, जबकि उसकी कही हुई बातों को इनमें से किसी ने कदापि नहीं कही है।

वहाबियों की रोचक आस्थाओं में से एक यह है कि वे क़िब्ले को ईश्वर के शारीरिक रूप से उपस्थित होने का स्थान मानते हैं और उनका मानना है कि नमाज़ के समय ईश्वर हर नमाज़ियों के सामने खड़ा होता है और उनसे कहता है कि नमाज़ियों को क़िब्ले की ओर नहीं थूकना चाहिए क्योंकि ईश्वर उसके सामने खड़ा होता है और इस कार्य के कारण ईश्वर को परेशानी और कष्ट होती है। यहां पर यह बात कहना चाहिए कि क़िब्ले की ओर मुंह करके खड़े होना, समन्वय और नमाज़ के समय मोमिनों के ध्यान के उद्देश्य से है। न यह कि ईश्वर उस दिशा में मौजूद है। ईश्वर हर स्थान पर मौजूद है और हर वस्तु से अवगत है। पवित्र क़ुरआन ने भी बहुत सी आयतों में इस बात पर बल दिया है कि (व हुआ अला कुल्ले शैइन क़दीर) अर्थात वह समस्त वस्तुओं पर सक्षम है। एक असीमित और अनंत अस्तित्व, समस्त चीज़ों से अवगत है और उसके नियंत्रण में संसार की पूरी वस्तुएं हैं। यदि ईश्वर के लिए किसी विशेष स्थान को मान लिया जाए, इस बात

के अतिरिक्त कि उसे समय और काल के लिए आवश्यकता रखने वाला बताएं तो हमने ईश्वर को एक स्थान और समय में सीमित कर दिया। दूसरी ओर वहाबी कठमुल्लाओं द्वारा ईश्वर को किसी विशेष स्थान और समय में सीमित करने का यह अर्थ होता है कि ईश्वर इस समय दूसरे स्थान पर मौजूद नहीं है और यह ईश्वर की क्षमता में कमी का चिन्ह है क्योंकि ईश्वर असीमित और अनंत अस्तित्व है जिसमें कोई भी कमी या अक्षमता नहीं पाई जाती।

इब्ने तैमिया ने ईश्वर के बारे में और भी बहुत सी बातें बयान की हैं और अपनी दुसाहसी बातों से उसने ईश्वर की शान को कम करने का भरसक प्रयास किया किन्तु ईश्वर इन जैसे तुच्छ लोगों की बातों से बहुत ही उच्च है। पवित्र क़ुरआन एक स्पष्ट गवाह है जो वास्तविकता को चिंतन मनन करने वालों और ज्ञानी लोगों के समक्ष स्पष्ट करता है। सूरए शूरा की आयत क्रमांक गयारह में आया है कि कोई भी वस्तु ईश्वर जैसी नहीं है। शीया मुसलमानों के प्रसिद्ध वरिष्ठ धर्मगुरू और पवित्र क़ुरआन के व्याख्याकार आयतुल्लाह मकारिम शीराज़ी इस आयत की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि वास्तविकता में यह बात ईश्वर की समस्त विशेषताओं को पहचानने का मुख्य आधार है कि जिस पर ध्यान दिए बिना ईश्वर की किसी भी विशेषता पर विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि ईश्वर की खोज करने वालों के मार्ग में पड़ने वाली सबसे ख़तरनाक ढाल यही

ईश्वर को बंदे जैसा बताने की ढाल है। इसी विषय के कारण लोग अनेकेश्वरवाद की खाई में गिर जाते हैं। दूसरे शब्दों में ईश्वर ऐसा अस्तित्व है जो हर दृष्टि से अनंत और असीमित है तथा उसके अतिरिक्त हर चीज़ की एक सीमा और एक अंत है। उदाहरण स्वरूप हमारे लिए बहुत से कार्य सरल हैं और कुछ कठिन, कुछ वस्तुएं हमसे निकट हैं तो कुछ दूर क्योंकि हमारा अस्तित्व सीमित है किन्तु उस अस्तित्व के लिए जो हर दृष्टि से असीमित है, सदैव बाक़ी व जारी रहने वाला है, सदैव से है और सदैव रहेगा, यह अर्थ कल्पना योग्य नहीं है।

हज़रत अली अलैहिस्सलाम ने भी नहजुल बलाग़ा में विभिन्न स्थानों पर ईश्वर की विशेषताओं को बयान किया है। हज़रत अली अलैहिस्सलाम की दृष्टि में ईश्वर की अनंत क्षमता, ऐसी है कि छोटे बड़े, भारी हल्के, शक्तिशाली और कमज़ोर समस्त जीव, सभी ईश्वर की सृष्टि और उसकी शक्ति के समक्ष समान हैं।

सुन्नी समुदाय के प्रसिद्ध धर्मगुरू इब्ने हजर मक्की अलफ़तावा अलहदीसा नामक पुस्तक में इब्ने तैमिया के बारे में लिखते हैं कि ईश्वर ने उसे अपमानित, पथभ्रष्ट, अंधा और बहरा कर दिया है और सुन्नी समुदाय के धर्मगुरूओं और हनफ़ी, मालिकी और शाफई पंथ के उसके समकालीन धर्मगुरूओं ने उसकी बातों और उसके विचार की भ्रष्टता को स्पष्ट रूप से बयान किया है, इब्ने तैमिया की

बातें मूल्यों से रहित हैं और वह धर्म में नई बातें प्रविष्ट करने वाला, पथभ्रष्ट, पथभ्रष्ट करने वाला और असंतुलित व्यक्ति है। ईश्वर उसके साथ अपने न्याय के अनुसार व्यवहार करे और हमें उसकी आस्थाओं की बुराइयों और उसके संस्कारों व मार्गों से सुरक्षित रखे।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-7

जैसा कि हमने पिछले कार्यक्रम में उल्लेख किया कि ईश्वर के बारे में वहाबियों का यह विश्वास कि ईश्वर भौतिक विशेषताओं का स्वामी है, क़ुराने मजीद और पैग़म्बरे इस्लाम (स) के पवित्र कथनों एवं सामान्यबोध के प्रतिकूल है, कहा जा सकता है कि यह धारणा केवल इब्ने तैमिया और उसके शिष्यों एवं अनुयाईयों की मानसिक उपज है। इब्ने तैमिया के इन्हीं पथभ्रष्ट विचारों के कारण सुन्नी विद्वानों ने उसका कड़ा विरोध किया और उसे जेल में डाल दिया गया। इब्ने तैमिया अपने पथभ्रष्ट विचारों पर अटल रहा यहां तक कि जेल में उसकी मौत हो गई और कदापि उसे सत्यता की प्राप्ति नहीं हुई। एकेश्वरवाद के बारे में वहाबियों के विश्वासों से संबंधित कार्यक्रम की एक अन्य कड़ी लेकर आपकी सेवा में उपस्थित हैं। इब्ने तैमिया ने मिन्हाज अलसुन्नाह एवं अल अक़ीदतुल हमुविय्या नामक पुस्तकों में एकेश्वरवाद से संबंधित अपने दृष्टिकोण का उल्लेख किया है। उसका मानना है कि ईश्वर की विशेषताओं में से एक दौड़ना है। उसका विश्वास है कि ईश्वर अपने सच्चे बंदों की ओर दौड़ता है ताकि उनके निकट आ जाये। इब्ने तैमिया अपनी दावे को सिद्ध करने हेतु पैग़म्बरे इस्लाम (स) की हदीस प्रस्तुत करता है किः ईश्वर कहता है कि यदि मेरा कोई बंदा एक बालिश्त मेरे निकट आयेगा तो मैं आधा मीटर उसके निकट जाऊंगा और यदि कोई आधा मीटर मेरी

ओर बढ़ता है तो मैं एक मीटर से भी अधिक उसकी ओर बढ़ूंगा। और अगर कोई धीरे धीरे चलकर मेरे पास आयेगा तो मैं दौड़कर उसकी ओर जाऊंगा।

अपने बंदो की ओर ईश्वर के दौड़ने को इब्ने तैमिया ठीक शारीरिक रूप से दौड़ना समझता है, जबकि वह हदीस के वास्तविक अर्थ से अनभिज्ञ है। वास्तव में इस हदीस में ईश्वर के अपने बंदों से हार्दिक एवं आध्यात्मिक रूप से निकट होने की ओर संकेत किया गया है और इस महत्वपूर्ण बिंदु का उल्लेख है कि जो बंदे ईश्वर से संपर्क करते हैं और उससे सहायता मांगते हैं ईश्वर उनकी प्रार्थना सुनता है और उनकी सहायता करता है। अतः जो भी कोई अधिक उपासना एवं प्रार्थना करेगा ईश्वर उस पर और भी अधिक कृपा करेगा।

इब्ने तैमिया द्वारा इस मूल्यवान हदीस का यह अर्थ निकालने से पता चलता है कि वह और उसके अनुयाई वहाबी ईश्वर को मनुष्यों के समान समझते हैं, इस लिए कि दौड़ना शरीर से विशेष है और शरीर की विशेषताओं में से है। सऊदी अरब के मुफ़्तियों की सर्वोच्च परिषद भी ईश्वर के दौड़ने को सही मानती है। सऊदी अरब के एक वरिष्ठ मुफ़्ती एक प्रश्न के उत्तर में फ़तवा देते हुए कहते हैं ईश्वर के चेहरे, हाथ, आंखें, पिंडली और उंगलियों के बारे में क़ुरान और हदीस में वर्णन है और इस पर सुन्नियों का विश्वास है... तथा पैग़म्बरे इस्लाम (स) ने ईश्वर के

अनुरूप उसकी इन विशेषताओं को सिद्ध किया है। यद्यपि वहाबी सदैव अपनी ग़लत बातों को पैग़म्बरे इस्लाम की हदीसों और यहां तक कि क़ुरान की आयतों से जोड़ देते हैं, जब कि कहीं भी क़ुरान में और पैग़म्बरे इस्लाम की प्रामाणिक हदीसों में ईश्वर के दौड़ने की ओर संकेत नहीं किया गया है बल्कि इस्लामी ग्रंथों में ईश्वर को मानव विशेषताओं से मुक्त माना गया है।

दयालू परमात्मा ने क़ुराने मजीद को एक ऐसी पुस्तक के रूप में भेजा है कि जो स्वयं उसकी ओर हमारा मार्गदर्शन करे ताकि विभिन्न विचारों एवं दृष्टिकोणों और जीवन के भंवर एवं भूल भुलय्यों में रास्ता न भटक जायें। हम यहां आपका ध्यान क़ुरान मजीद की आयतों की ओर आकर्षित करना चाहते हैं ताकि ईश्वर से भय रखने वालों की ओर ईश्वर के दौड़ने से पैग़म्बरे इस्लाम (स) का वास्तविक तात्पर्य समझ में आ जाये। क़ुरान के अन्कबूत सूरे की 69वीं आयत में ईश्वर कहता है किः और वे कि जो हमारे मार्ग में श्रद्धा से प्रयास करेंगे निश्चिंत ही हम उन्हें अपने मार्ग की ओर मार्गदर्शित करेंगे, और ईश्वर भलाई करने वालों के साथ है। ईश्वर अपनी राह में प्रयास करने वालों को इस प्रकार प्रतिफल प्रदान करता है और उन पर अपनी विशेष कृपा करता है और वास्तव में पैग़म्बरे इस्लाम (स) की हदीस में ईश्वर का अपने नेक बंदो की ओर दौड़ने से यही तात्पर्य है। क़ुरान में इस प्रकार की आयतें कि ईश्वर अपने बंदों को सही रास्ता दिखाता है अधिक हैं

किन्तु न यह कि दौड़कर या किसी मानव गतिविधि द्वारा, इस लिए कि उसे इस प्रकार की गतिविधियों की आवश्यकता नहीं है।

इब्ने तैमिया का विश्वास है कि ईश्वर को देखा जा सकता है। इस संदर्भ में उसका कहना है कि हर वह वस्तु जिसका अस्तित्व जितना संपूर्ण होता है उतनी ही देखने के लिए उपयुक्त होती है, और चूंकि ईश्वर समस्त जीवों में सबसे संपूर्ण है इस लिए सबसे अधिक नज़र आने के लिए उपयुक्त भी है परिणामस्वरूप ईश्वर दिखाई दिया जाना चाहिए। (मिन्हाज अल सुन्नाह,1-217)

ईश्वर को देखने के विषय में वहाबियों ने सभी सीमाएं लांघ कर ऐसा दृष्टिकोण अपनाया है कि हर बुद्धिमान व्यक्ति आश्चर्यचकित रह जाता है। इब्ने तैमिया का मानना है कि प्रलय के दिन ईश्वर भेस बदलकर लोगों के सामने आयेगा और अपना परिचय देगा और कहेगा कि मैं तुम्हारा ईश्वर हूं। परन्तु लोग उत्तर में कहेंगे हम तुझे नहीं पहचानते और तेरे मुक़बले में अपने ईश्वर की शरण चाहते हैं। यदि हमारा ईश्वर आ जाये तो हम उसे पहचान लेंगे। फिर ईश्वर अपने असली रूप में उनके सामने आता है और अपना परिचय देता है। तो वे लोग कहते हैं कि हां, तू हमारा ईश्वर है उसके बाद यह लोग ईश्वर के साथ स्वर्ग की ओर चले जाते हैं। (मजमू अल फ़तावा, 6-492)

क्या वहाबियों ने अपनी इन बातों से ईश्वर पर ऐसे कामों का आरोप नहीं लगाया है कि जिन्हें अंजाम देने से एक बुद्धिमान व्यक्ति भी बचता है? वास्तव में उन्होंने ईश्वर को मज़ाक़ बना लिया है। दूसरा प्रश्न यह कि क्या लोगों ने दुनिया में पहले कभी ईश्वर को देखा है कि जो प्रलय के दिन उसे उसके असली रूप में पहचान जायेंगे? क्या आपमें से किसी ने ईश्वर को देखा है या किसी ऐसे व्यक्ति को जानते हो कि जिसने ईश्वर को देखा हो?

संभवतः क़ुरान की जिस आयत में स्पष्ट रूप से ईश्वर के दिखाई पड़ने को असंभव बताया गया है वह सूरए अनाम की एक सौ छटी आयत है जिसमें ईश्वर कहता हैः आंखें उसे नहीं देखतीं किन्तु वह समस्त आंखों को देखता है और वह समस्त अनुकंपाओं का दाता एवं हर चीज़ का जानने वाला है।

दूसरी आयत कि जिसमें भौतिक रूप से ईश्वर के दिखाई पड़ने की संभावना से इंकार किया गया है सूरए आराफ़ की 143वीं आयत है जिसमें ईश्वर कहता है कि जब मूसा निर्धारित स्थान पर आये और उनके पालनहार ने उनसे बात की तो उन्होंने कहा, हे पालनहार, तू मुझे अपना दर्शन करा ताकि मैं तुझे देख सकूं, (ईश्वर ने) कहा, तुम मुझे कदापि नहीं देख सकते।

इन दो आयतों से पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि इब्ने तैमिया की धारणा के विपरीत ईश्वर को कभी नहीं देखा जा सकता।

इब्ने तैमिया और दूसरे वहाबियों ने ईश्वर के संबंध में और भी ऐसी बातें कहीं हैं जिन पर एक उचटती हुई दृष्टि डालते हैं। उनका कहना है कि ईश्वर मच्छर पर बैठकर सवारी करता है, ईश्वर एक ऐसा युवा है कि जिसके घुंगराले बाल हैं, ईश्वर की आंखे आ जाती हैं और फ़रिश्ते उसकी देखभाल के लिए जाते हैं, ईश्वर पैग़म्बर से हाथ मिलाता है, ईश्वर के जूते सोने के हैं, ईश्वर की कमर, बाज़ू, और उंगलियां हैं, उसे आश्चर्य होता है और वह हंसता है इत्यादि...

इस प्रकार के अंधविश्वासों का हम पहले ही उत्तर दे चुके हैं कि ईश्वर की मानव सहित किसी भी चीज़ से तुलना नहीं की जा सकती और उसका शरीर नहीं है। पुनः क़ुरान की सहायता लेते हैं। सरए अन्कबूत की 68वीं आयत में ईश्वर उन लोगों को नास्तिक कहता है जो उस पर झूटे और अनेकेश्वरवादी आरोप लगाते हैं। वह कहता है कि उससे बड़ा अत्याचारी कौन है कि जो ईश्वर पर झूटा आरोप लगाये या उस पर सत्यता के उजागर हो जाने के बाद उसे झुटला दे? क्या नास्तिकों का स्थान नर्क में नहीं है?

नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली (अ) का दार्शनिक कथन है कि ... क़ुरान में एकेश्वरवाद के बारे में आया है कोई भी वस्तु उसके समान नहीं है, अतः किसी भी चीज़ को ईश्वर के समरूप समझना मिथ्या एवं भ्रम है, और जिस किसी ने भी ईश्वर को किसी चीज़ के समान समझा उसने लक्ष्य को गुम कर दिया, यदि इस प्रकार ईश्वर का गुणगान किया कि जिसका परिणाम समरूपता हो तो वास्तव में उसने प्राणी का वर्णन किया न कि स्वयं उसकाष इस लिए कि वह किसी भी चीज़ के समान नहीं है, इस लिए जिस किसी ने ईश्वर को किसी चीज़ के सदृश्य जाना तो उसने ईश्वर की अनुभूति प्राप्ति के मार्ग को छोड़ दिया और लक्ष्य को गुम कर दिया, और जो कोई ईश्वर की ओर इशारा करे या उसे अपने मन में सोचे तो वास्तव में उसने उसे नहीं पहचाना।

सुन्नियों के प्रसिद्ध विद्वान ग़ज़ाली का कहना है कि यदि कोई यह सोचे कि ईश्वर का शरीर है कि जो अनेक अंगो से मिलकर बना है तो वह बुत परस्त है, इस लिए कि हर शरीर प्राणी और सृजित है और हर काल के धार्मिक गुरूओं एवं विद्वानों की आम राय में प्राणी की उपासना नास्तिकता एवं बुत परस्ती है। (अल जामुल अवाम अन इल्मिल कलाम,209) अहले सुन्नत के एक दूसरे वरिष्ठ धर्म गुरू क़ुरतबी कि जिनका 671 हिजरी क़मरी में निधन हुआ उन लोगों के बारे में

कि जो ईश्वर के शरीर पर विश्वास रखते हैं कहते हैं कि सही बात यह कि जो यह मानते हैं कि ईश्वर का शरीर है वे नास्तिक हैं। इस लिए कि उन लोगों में और बुत परस्तों में कोई अंतर नहीं है।

अनेक मुसलमान विद्वानों एवं इतिहासकारों का मानना है कि इब्ने तैमिया सहित कुछ मुसलमान ईश्वर के शरीर होने के संबंध में यहूदियों से प्रभावित हैं। शहरिस्तानी अपनी पुस्तक मिलल व नहल में लिखते हैं कि बहुत से यहूदी कि जो इस्लाम की ओर आकृषित हुए उन्होंने ईश्वर के शरीर से संबंधित अनेक हदीस गढ़ीं और उन्हें इस्लामी रंग दे दिया, ईश्वर के शरीर से संबंधित समस्त हदीसों का स्रोत तोरा है। प्रसिद्ध इतिहासकार इब्ने ख़लदून का भी कहना है कि इस्लाम के प्रारंभिक काल के मुसलमान पढ़े लिखे नहीं थे तथा ब्रह्माण्ड की सृष्टि और जीवन के दर्शन के बारे में यहूदी एवं ईसाइ धर्मगुरूओं से प्रश्न करते थे। इब्ने ख़लदून का मानना है कि हदीस की कुछ प्रमाणित पुस्तकों में भी ऐसी हदीसों की संख्या कम नहीं है कि जिन्हें यहूदियों ने गढ़ा है या उनकी सहायता से गढ़ा गया है।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-8

शेफ़ाअत अर्थात सिफ़ारिश के शब्द से सभी पूर्णरूप से अवगत हैं। जब भी अपराध, पाप और एक व्यक्ति की निंदा की बात होती है और कोई व्यक्ति

मध्यस्थ बनता है ताकि उसे दंड से मुक्ति दिलाए तो कहते हैं कि अमुक व्यक्ति ने उसके लिए सिफ़ारिश की।

शेफ़ाअत का अर्थ होता है किसी व्यक्ति को होने वाली हानि को दूर करने के लिए मध्यस्थ बनना और उसके हितों की पूर्ति करना है। धार्मिक दृष्टि में शेफ़ाअत का अर्थ यह है कि ईश्वर के निकट बंदों में से एक मनुष्य के लिए पापों की क्षमा याचना करता है और ईश्वर से वितनी करता है कि अमुक व्यक्ति के पापों को क्षमा कर दे या उसके प्रकोप को कम कर दे। अन्य इस्लामी समुदायों और वहाबी पंथ के मध्य पाये जाने वाले मतभेदों में से शेफ़ाअत भी का मुद्दा है। अलबत्ता वहाबी भी मूल सिद्धांत के रूप में एक प्रकार की शेफ़ाअत को स्वीकार करते हैं किन्तु उनका मानना है कि शेफ़ाअत प्रलय के दिन से विशेष है कि शेफ़ाअत करने वाले मुसलमानों के पापों के संबंध में शेफ़ाअत करेंगे और शेफ़ाअत के संबंध में पैग़म्बरे इस्लाम का सबसे अधिक भाग होगा। वहाबियों की मूल बातें यह हैं कि किसी भी मुसलमानों को इस संसार में पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वर के निकट बंदों से शेफ़ाअत मांगने का कोई अधिकार नहीं है। जबकि पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वर के अन्य निकटवर्ती बंदों से शेफ़ाअत, पैग़म्बरे इस्लाम के काल से अब तक मुसलमानों के मध्य प्रचलित रही है। मुसलमानों के किसी भी बुद्धिजीवी और धर्मगुरू ने भी योग्य बंदो से शेफ़ाअत की बात का खंडन नहीं किया है किन्तु

आठवीं हिजरी क़मरी के आरंभ में इब्ने तैमिया और उसके बाद मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब नज्दी ने ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य से शेफ़ाअत को वर्जित घोषित कर दिया और इस दृष्टिकोण के विरोधियों को काफ़िर और अनेकेश्वरवादी बताया।

इन दोनों का मानना था कि पैग़म्बर, फ़रिश्ते और ईश्वर के निकटवर्ती बंदे जिस शेफ़ाअत के स्वामी हैं उसका संसार से कोई लेना देना नहीं है बल्कि उन्हें केवल प्रलय में शेफ़ाअत का अधिकार प्राप्त है। इस आधार पर यदि कोई बंदा इस संसार में अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के उद्देश्य से अपने और ईश्वर के मध्य मध्यस्थ बनाए और उनकी शेफ़ाअत पर नज़र रखे हुए हो तो उसका यह कार्य अनेकेश्वरवाद में गिना जाता है और वह ईश्वर के अतिरिक्त किसी और का बंदा समझा जाता है। हर बंदे को प्रत्यक्ष रूप से केवल ईश्वर से आस लगाना चाहिए और कहे कि ईश्वर मुझे उन लोगों में शुमार कर जिनकी मुहम्मद (स) शेफ़ाअत करें। यह न कहो कि मुहम्मद, ईश्वर के निकट मेरी शेफ़ाअत कीजिए।

सलफ़ियों और मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब के अनुयायियों ने शेफ़ाअत के विषय पर बहुत अधिक हंगामा मचाया है और अब तक शेफ़ाअत के विषय पर आतंक

मचाते चले आ रहे हैं और शेफ़ाअत के मानने वालों के विरुद्ध बहुत उटपटांग बातें करते हैं।

सलफ़ियों ने ईश्वर के निकटवर्ती बंदों से शेफ़ाअत न करने पर कुछ तर्क पेश किए हैं। पहला यह है कि वे इस काम को अनेकेश्वरवाद समझते हैं क्योंकि उनका मानना है कि शेफ़ाअत मांगना, वास्तव में शेफ़ाअत करने वाले की उपासना है। अर्थात मनुष्य शेफ़ाअत की विनती करके मानो ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य से सहायता मांग रहा है और दूसरे को ईश्वर का समकक्ष ठहराता है।

वहाबी पंथ के संस्थापक मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब ने अपनी पुस्तक कश्फ़ुश्शुबहात में अनेकेश्वरवाद की चर्चा में दावा किया है कि शेफ़ाअत और तवस्सुल अर्थात किसी को मध्यस्थ बनाना अनेकेश्वरवाद का भाग है और इसीलिए वे बहुत से मुसलमानों को अनेकेश्वरवादी कहते हैं।

वास्तव में इस पंथ का दृष्टिकोण इस्लाम धर्म में प्रचलित दृष्टिकोणों से पूर्ण रूप से भिन्न है। सौभाग्य की बात यह है कि हम आपको यह बताएं कि शेफ़ाअत के विषय में वहाबी भ्रांतियों का शिकार हैं। इन भ्रांतियों के उत्तर में यह कहना चाहिए कि किसी भी व्यक्ति से शेफ़ाअत की विनती को उसी समय अनकेश्वरवाद

में गिना जाता है जब शेफ़ाअत करने वाले को ईश्वर, सृष्टि का रचयिता और लोक परलोक का स्वामी कहा जाए किन्तु वास्तव में ईश्वर के निकट बंदो से शेफ़ाअत की इच्छा अनेकेश्वरवाद नहीं है बल्कि शेफ़ाअत मांगने वाले शेफ़ाअत करने वाले को ईश्वर का निकटवर्ती बंदा जानते हैं जो न तो कदापि ईश्वर है और न ही ईश्वरीय काम करता है बल्कि चूंकि वे ईश्वर के निकटवर्ती थे इसीलिए उनमें शेफ़ाअत की योग्यता पैदा हो गयी। दूसरी ओर इस्लामी शिक्षाओं में आया है कि शेफ़ाअत करने वाले केवल ईश्वर की अनुमति की परिधि में ही पापियों और एकेश्वरवादियों की शेफ़ाअत कर सकते हैं और ईश्वर से उनके पापों को क्षमा करने का अह्वान करते हैं।

पवित्र क़ुरआन की आयतों के दृष्टिगत हमें यह पता चलता है कि पैग़म्बरे इस्लाम और अन्य सच्चे लोगों से शफ़ाअत मांगना वास्तव में ईश्वरीय क्षमायाचना के लिए दुआ है। ईश्वर के निकट पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वरीय बंदों के निकट और उच्च स्थान के दृष्टिगत मुसलमान उनसे चाहते हैं कि वे उनके लिए दुआएं करें क्योंकि उनका मानना है कि ईश्वर अपने पैग़म्बर और निकटवर्ती बंदों की दुआओं को रद्द नहीं करता और उनकी दुआओं को अवश्य स्वीकार करता है और उनके माध्यम से पापियों के पाप को क्षमा कर देता है।

पवित्र क़ुरआन गवाही देता है कि लोगों के संबंध में पैग़म्बरे इस्लाम की क्षमा याचना पूर्ण रूप से प्रभावी और लाभदायक है। सूरए मुहम्मद की आयत क्रमांक 19 में आया है कि अपने पापों और ईमान वालों के लिए क्षमा याचना करो। इसी प्रकार सूरए तौबा की आयत संख्या 103 में आया है कि उनके लिए दुआएं करो, आपकी दुआएं उनकी शांति का स्रोत हैं।

जब लोगों के लिए पैग़म्बरे इस्लाम की दुआएं इतनी लाभदायक हैं तो इस बात में क्या समस्या है कि उनसे अपने लिए दुआएं करने की विनती की जाए। दूसरी ओर दुआ करना शेफ़ाअत के अतिरिक्त क्या कोई और वस्तु है?

हदीस की किताबों में भी शेफ़ाअत शब्द का प्रयोग दुआ के अर्थ में बहुत अधिक किया गया है। यहां तक कि सुन्नी समुदाय की प्रसिद्ध पुस्तक सही बुख़ारी के लेखक ने अपनी पुस्तक में शेफ़ाअत शब्द से लाभ उठाया है। सही बुख़ारी सुन्नी समुदाय की सबसे मान्यता प्राप्त पुस्तकों में से एक है जिसके लेखक इमाम मुहम्मद बुख़ारी हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक के दो अध्यायों में लिखा कि पैग़म्बर और ईश्वर के निकटवर्ती बंदो से दुआ करने को शेफ़ाअत कहा जाता है। वे लिखते हैं कि जब भी लोगों ने इमाम से शेफ़ाअत की कि वे उनके लिए ईश्वर से वर्षा की मांग करें तो उन्हें उनकी मांग को रद्द नहीं करना चाहिए। इस आधार पर सुन्नी

समुदाय के धर्म गुरू भी ईश्वर के अतिरिक्त अन्य लोगों से शेफ़ाअत को वैध समझते हैं।

एक अन्य स्पष्ट साक्ष्य जो इस बात का चिन्ह है कि शिफ़ाअत का अर्थ दुआ है, इब्ने अब्बास के हवाले से पैग़म्बरे इस्लाम का कथन है। इस कथन में आया है कि जब भी कोई मुसलमान मरता है और उसके जनाज़े पर चालीस लोग जिन्होंने अनेकेश्वरवाद नहीं किया, नमाज़ पढ़ें तो ईश्वर उसके संबंध में उनकी शिफ़ाअत को स्वीकार करता है।

मुर्दे के संबंध में चालीस लोगों की शिफ़ाअत इसके अतिरिक्त कुछ और नहीं है कि उसके जनाज़े पर नमाज़ पढ़ने के समय उसके लिए ईश्वर से क्षमा याचना करें। इस आधार पर यदि शिफ़ाअत की प्रवृत्ति दुआ करना है तो इस दुआ की मांग करने को अनेकेश्वरवाद क्यों समझा जाता है?

शिफ़ाअत के विषय को रद्द करने में वहाबी कठमुल्लाओं का एक और तर्क यह है कि अनेकेश्वरवादियों के अनेकेश्वरवाद का कारण, मूर्तियों से शिफ़ाअत की विनती करना है और पवित्र क़ुरआन में भी इस विषय का वर्णन किया गया है। सूरए यूनुस की आयत संख्या 18 में आया है कि और यह लोग ईश्वर को छोड़कर

उनकी उपासना करते हैं जो न हानि पहुंचा सकते हैं और न लाभ और यह लोग कहते हैं कि यह ईश्वर के यहां हमारी सिफ़ारिश करने वाले हैं। इस आधार पर पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वर के निकटवर्ती बंदों से हर प्रकार की शिफ़ाअत मांगना, अनेकेश्वरवादियों के मूर्ति से शिफ़ाअत की विनती के भांति है।

वहाबियों की इस आस्था के उत्तर में यह कहना चाहिए कि इन दोनों शिफ़ाअतों में ज़मीन आसमान का अंतर है। अनेकेश्वरवादी, मूर्तियों को अपना ईश्वर समझते हैं इसीलिए वे उनसे शिफ़ाअत की विनती करते हैं जबकि एक मुसलमान व्यक्ति, ईश्वर के निकटवर्ती बंदे के रूप में ईश्वर के निकट व सच्चे बंदों से दुआ और उनसे शिफ़ाअत की विनती करता है।

मुसलमानों का मानना है कि पैग़म्बरे इस्लाम, शालीन मोमीनों और ईश्वर के निकटवर्ती बंदों और शहीदों के लिए शिफ़ाअत के स्थान की पुष्टि हो गयी है। कितना अच्छा है कि मनुष्य चाहे लोक में या परलोक में ईश्वर के निकट बंदों और उसके पैग़म्बर को ईश्वर के समक्ष अपना शिफ़ाअत करने वाला बनाए।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-9

इस्लाम धर्म में शिफ़ाअत ईश्वर की ओर से मनुष्यों पर एक विभूती बतायी गयी है। जिन लोगों ने उपासना के बंधन को नहीं तोड़ा है और अनेकेश्वरवाद का शिकार नहीं हुए हैं, ईश्वर के निकटवर्ती बंदों की शिफ़ाअत उनके लिए आशा की किरण है जो निराशा को उनके दिलों से दूर करती है और ईश्वरीय दया की ओर उनके दिलों को प्रेरित व उत्साहित करती है किन्तु शिफ़ाअत के विषय में विदित रूप से इस्लाम की ओढ़नी ओढ़े कुछ संप्रदायों की भ्रांतियां वह विषय है जिसकी समीक्षा करना अतिआवश्यक है। पिछले कार्यक्रम में शिफ़ाअत के विषय को नकारने के संबंध में वहाबियों की ओर से प्रस्तुत किए गये कुछ तर्कों को पेश किया और सुन्नी समुदाय की मान्यता प्राप्त पुस्तकों से प्रमाण और क़ुरआनी तर्कों को पेश करके इन भ्रांतियों का ठोस उत्तर दिया। इस कार्यक्रम में भी हम आपको यह बताएंगे कि किन तर्कों के कारण वहाबी शिफ़ाअत के विषय का विरोध करते हैं और उसका तर्कसंगत उत्तर आपके सामने पेश करेंगे। कृपया हमारे साथ रहिए।

वहाबियों का यह मानना है कि पवित्र क़ुरआन के स्पष्ट आदेशानुसार दुआ के समय ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से दुआ नहीं करनी चाहिए और ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से शिफ़ाअत की मांग करना वास्तव में ईश्वर के अलावा किसी और से अपनी मांगें मांगना है। वहाबी अपनी इस बात के लिए सूरए जिन्न

की आयत संख्या 18 की ओर संकेत करते हैं जिसमें आया है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से न मांगो। इसी प्रकार सूरए ग़ाफ़िर की आयत संख्या 60 में आया है कि मुझसे दुआ करो मैं स्वीकार करूंगा।

सूरए जिन्न की अट्ठारहवीं आयत में पवित्र क़ुरआन मुसलमानों से मांग करता है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से न मांगो, इस प्रकार से उसने ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य की उपासना के विषय को प्रस्तुत किया है क्योंकि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और की उपासना और उसके लिए सजदा और रूकअ करना, अनकेश्वरवाद है और इस कार्य को अंजाम देने वाला अनेकेश्वरवादी होगा किन्तु यहां पर यह बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ईश्वर के निकटवर्ती बंदों से शिफ़ाअत की इच्छा, उनकी उपासना के अर्थ में नहीं है बल्कि जो भी शिफ़ाअत की इच्छा रखता है उसे यह पूर्ण रूप से ज्ञात होता है कि केवल ईश्वर की अनुमति से ही शिफ़ाअत संभव है। इस प्रकार के लोग ईश्वर के निकटवर्ती लोगों और सच्चे, निष्ठावान और मोमिन बंदों को मध्यस्थ बनाते हैं ताकि वे ईश्वर के निकट उसके लिए दुआ करें क्योंकि ईश्वर अपने पैग़म्बरों और निकटवर्ती बंदों की दुआओं को कभी भी रद्द नहीं करता।

यदि कोई व्यक्ति ईश्वरीय दूतों से यह चाहे कि वे उसके लिए दुआ करें ताकि ईश्वर उसके पापों को क्षमा कर दे या उसके मन की इच्छा को पूरा कर दे तो उसने कभी भी ईश्वरीय दूतों को ईश्वर के समान नहीं समझा बल्कि केवल उसने उन्हें मध्यस्थ बनाया है। इस्लाम धर्म के प्रसिद्ध विद्वान और पवित्र क़ुरआन के व्याख्याकार अल्लामा तबातबाई इस आस्था के संबंध में कहते हैं कि इमाम से अपनी मांगों का मांगना उसी समय अनेकेश्वरवाद समझा जाएगा जब दुआ मांगने वाला इमाम को ईश्वर की भांति प्रभावी और अपार शक्ति का स्वामी समझे किन्तु उसे यह ज्ञात है कि समस्त चीज़ें ईश्वर के हाथ में है और केवल वही प्रभावी है, इमाम को केवल मध्यस्था या माध्यम समझता है, तो इसमें अनेकेश्वरवाद की कोई बात ही नहीं है।

अब्दुल वहहाब की ओर से इस्लाम के नाम पर फैलायी गयीं भ्रष्ट आस्थाएं, इस्लाम धर्म की मान्यता प्राप्त हदीसों, कथनों और शिक्षाओं से बहुत ही सरलता से अपमानित और खंडित हो जाती हैं। वास्तविकता यह है कि मुहम्मद इब्ने अब्दुलवहहाब और इसी प्रकार इब्ने तैमिया उपासना की गहराई को समझ ही नहीं सके हैं। उन्होंने यह समझा या यह दिखाने का प्रयास किया कि ईश्वर के सच्चे और शिष्टाचारी बंदों से शिफ़ाअत की मांग करना, उनकी उपासना के अर्थ में है। उन्हें ज्ञात ही नहीं है कि मूल उपासना, ईश्वर के समक्ष पूर्ण रूप से विनम्र और

नतमस्तक होना है और शालीन व योग्य लोगों के सम्मान और उनसे विनम्रभाव से दुआ करने की गणना उपासना में नहीं होती। विशेषकर यदि यह लोग ईश्वरीय दूत और पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजन हों, जो स्वयं ईश्वर की उपासना और आज्ञापालन के आदर्श हैं।

वहाबियों ने शिफ़ाअत की रद्द में जो तर्क प्रस्तुत किए हैं उनमें से एक यह है कि उनका मानना है कि शिफ़ाअत का अधिकार केवल ईश्वर को है और उसके अतिरिक्त किसी को भी इस प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं है। उन्होंने अपने दावे की पुष्टि के लिए पवित्र क़ुरआन के सूरए ज़ुमर की आयत संख्या 43 और 44 को पेश किया जिसमें आया है कि क्या उन लोगों ने ईश्वर को छोड़कर सिफ़ारिश करने वाले चुन लिए हैं तो आप उनसे कह दीजिए कि ऐसा क्यों है, चाहे इन लोगों के बस में कुछ न भी हो और किसी प्रकार की बुद्धि न रखते हों? आप कह दीजिए कि शिफ़ाअत का पूरा अधिकार अल्लाह के हाथों में है, उसी के पास धरती और आकाश का सारा प्रभुत्व है और इस के बाद तुम भी उसी की ओर पलटाए जाओगे।

इस आयत का यह तात्पर्य नहीं है कि आप कहें कि केवल और केवल ईश्वर ही शिफ़ाअत करता है और किसी को शिफ़ाअत करने का अधिकार नहीं है क्योंकि इस

बात में कोई संदेह नहीं है कि सैद्धांतिक रूप से ईश्वर कभी भी किसी की किसी के निकट सिफ़ारिश नहीं करता, ईश्वर इन सब चीज़ों से महान और बड़ा है। बुद्धि भी इस विषय को स्वीकार नहीं करती कि हम यह कहें कि ईश्वर अमुक व्यक्ति का मध्यस्थ बना कि उसके पाप क्षमा कर दिए गये क्योंकि इसके तुरंत बाद मन में यह प्रश्न उठता है कि ईश्वर किसके निकट मध्यस्थ बना? इस आयत में चर्चा का बिन्दु यह है कि ईश्वर स्वामी और स़िफ़ारिश स्वीकार करने वाला है और वह जिसमें भी योग्यता और शालीनता देखता है उसे इस बात की अनुमति देता है कि अमुक व्यक्ति की सिफ़ारिश करे। इस स्थिति में इस आयत का वहाबियों के दावों से दूर दूर का भी संबंध नहीं है क्योंकि इस आयत में उन लोगों और उन वस्तुओं के बारे में बात हो रही है जिनमें बुद्धि या सोचने की शक्ति नहीं है जबकि ईश्वरीय दूत और ईश्वर के निकटवर्ती बंदे इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ हैं।

पैग़म्बरे इस्लाम (स) के काल से अब तक मसलमान केवल ईश्वर को ही शिफ़ाअत का स्वामी और उसे स्वीकार करने वाला समझते थे न उनके उतराधिकारियों और उनके निकटवर्ती साथियों को। मुसलमानों का यह मानना था कि शिफ़ाअत वही कर सकता है जिसे ईश्वर ने अनुमति दी हो और पवित्र क़ुरआन की आयतों और हदीसों में भी यह मिलता है कि ईश्वर ने पैग़म्बर को शिफ़ाअत

करने की अनुमति दी है। इस प्रकार से पैग़म्बरे इस्लाम (स) से शिफ़ाअत की अनुमति पाने वाले के रूप में शिफ़ाअत की गुहार लगाते हैं।

तिरमीज़ी और बुख़ारी जैसे सुन्नी समुदाय के दिग्गज धर्मगुरूओं ने अपनी हदीसों की किताबों में कभी भी शिफ़ाअत को अनेकेश्वरवाद नहीं कहा। सोनने तिरमीज़ी सुन्नी मुसलमानों के निकट हदीस की एक मान्यता प्राप्त और सुन्नी समुदाय के स्रोत सहाये सित्ता में शामिल एक पुस्तक है जिसको मुहम्मद तिरमीज़ी ने लिखा था। मुहम्मद तिरमीज़ी इस पुस्तक में शिफ़ाअत के बारे में अनस बिन मालिक के हवाले से लिखते हैं कि मैंने पैग़म्बरे इस्लाम (स) से कहा कि प्रलय के दिन मेरी शिफ़ाअत करें, उन्होंने स्वीकार कर लिया और कहा कि मैं यह काम करूंगा। मैंने पैग़म्बरे इस्लाम से कहा कि मैं आपको कहां ढूंढूगा? तो उन्होंने कहा कि सेरात के पुल के पास।

अनस ने पूरे विश्वास के साथ पैग़म्बरे इस्लाम से अपनी शिफ़ाअत करने को कहा और पैग़म्बरे इस्लाम ने भी उन्हें इसका वचन दिया। यदि अनस को यह ज्ञात होता कि शिफ़ाअत अनेकेश्वरवाद है तो वह कभी भी पैग़म्बरे इस्लाम से शिफ़ाअत के लिए न कहते और पैग़म्बरे इस्लाम कभी भी उनको शिफ़ाअत का वचन न देते।

पैग़म्बरे इस्लाम के अन्य साथी जिन्होंने उनसे शिफ़ाअत की इच्छा प्रकट की सवाद बिना आज़िब हैं। उन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम की प्रशंसा में शेर कहे और शेर में ही उन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम से शिफ़ाअत की मांग की। उनके शेर का अनुवाद हैः हे पैग़म्बर प्रलय के दिन मेरी शिफ़ाअत करने वाले बनें, जिस दिन किसी अन्य की शिफ़ाअत खजूर की गुठली के चीरे की मात्रा में भी सवाद बिन आज़िब के काम नहीं आएगी।

सलफ़ी मत के वैचारिक गुरू इस प्रकार की हदीसों की ओर संकेत नहीं करते और उसकी व्याख्या नहीं करते जैसे सूरए निसा की 64वीं आयत, जिसमें शिफ़ाअत के विषय को स्पष्ट शब्दों में पेश किया गया है। इस आयत में हम पढ़ते हैं कि और हमने किसी पैग़म्बर को भी नहीं भेजा किन्तु केवल इसलिए कि ईश्वरीय आदेश से उसका अनुसरण किया जाए और काश जब उन लोगों ने अपनी आत्मा पर अत्याचार किया था तो आप उनके पास आते और स्वयं भी अपने पापों के लिए क्षमा करते और पैग़म्बर भी उनके लिए पापों की क्षमा करते तो यह ईश्वर को बड़ा ही तौबा स्वीकार करने वाला और दयालु पाते।

इस आयत में ईश्वर स्पष्ट शब्दों में बंदो के पापों को क्षमा करने के लिए अपने पैग़म्बर को माध्यम व मध्यस्थ बताता है। सुन्नी समुदाय के बड़े धर्मगुरू फ़रूद्दीन राज़ी अपनी पुस्तक तफ़सीरे कश्शाफ़ में इस संबंध में लिखते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम ने उनके लिए क्षमा याचना की। इसका उद्देश्य पैग़म्बरे इस्लाम के स्थान को श्रेष्ठ करना है। यह इस अर्थ में है कि वे लोग उस व्यक्ति के पास आए जो श्रेष्ठ स्थान पर असीन और ईश्वर का दूत है। अनदेखे संसार की वास्तविकता उस पर ईश्वरीय आदेश वहि द्वारा उतरती हैं और ईश्वर के बंदों के बीच ईश्वर का प्रतिनिधि है क्योंकि वह उस श्रेष्ठ स्थान का स्वामी है जिसमें उनकी शिफ़ाअत रद्द नहीं होगी।

जबकि ईश्वर ने स्वयं ही स्पष्ट रूप से यह अधिकार अपने पैग़म्बर को दिया है फिर वहाबी क्यों इसे रद्द करते हैं? यहां पर उचित है कि इबने तैमिया की वह बात भी सुना जाए जिसमें वह कहता है कि ईश्वर ने अपने निकटवर्ती बंदों को शिफ़ाअत का अधिकार दिया है किन्तु हमें इसकी मांग से रोका है। यह औचित्य इस बात का सूचक है कि शिफ़ाअत के विषय में सलफ़ी बंद गली में पहुंच गये हैं क्योंकि ईश्वर ने सूरए निसा की 64वीं आयत में अपने बंदों से कहा है कि वह पैग़म्बर से शिफ़ाअत की मांग करें। इस बात के अतिरिक्त क्या यह संभव है कि ईश्वर किसी को किसी वस्तु का अधिकार दे और उसके प्रयोग से उसे रोक दे? इस

बात में ही स्पष्ट रूप से विरोधाभास है? यदि ईश्वर ने यह अधिकार अपने निकटवर्ती बंदों को दिया है तो यह इस अर्थ में है कि दूसरे इस अधिकार से लाभान्वित हों, न यह कि इसकी मांग ही न करें। यहां पर एक कहने को दिल चाह रहा है कि सलफ़ियों की हर बातों व तर्कों में सदैव बहुत अधिक विरोधाभास पाया जाता है जो इस बात की निशानी है कि इस पथभ्रष्ट संप्रदाय का तर्क बहुत ही कमज़ोर है।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-10

इस्लाम धर्म में शिफ़ाअत ईश्वर की ओर से मनुष्यों पर एक विभूती बतायी गयी है। जिन लोगों ने उपासना के बंधन को नहीं तोड़ा है और अनेकेश्वरवाद का शिकार नहीं हुए हैं, ईश्वर के निकटवर्ती बंदों की शिफ़ाअत उनके लिए आशा की किरण है जो निराशा को उनके दिलों से दूर करती है और ईश्वरीय दया की ओर उनके दिलों को प्रेरित व उत्साहित करती है किन्तु शिफ़ाअत के विषय में विदित रूप से इस्लाम की ओढ़नी ओढ़े कुछ संप्रदायों की भ्रांतियां वह विषय है जिसकी समीक्षा करना अतिआवश्यक है। पिछले कार्यक्रम में शिफ़ाअत के विषय को नकारने के संबंध में वहाबियों की ओर से प्रस्तुत किए गये कुछ तर्कों को पेश किया और सुन्नी समुदाय की मान्यता प्राप्त पुस्तकों से प्रमाण और क़ुरआनी तर्कों को पेश करके इन भ्रांतियों का ठोस उत्तर दिया। इस कार्यक्रम में भी हम आपको यह

बताएंगे कि किन तर्कों के कारण वहाबी शिफ़ाअत के विषय का विरोध करते हैं और उसका तर्कसंगत उत्तर आपके सामने पेश करेंगे। कृपया हमारे साथ रहिए।

वहाबियों का यह मानना है कि पवित्र क़ुरआन के स्पष्ट आदेशानुसार दुआ के समय ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से दुआ नहीं करनी चाहिए और ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से शिफ़ाअत की मांग करना वास्तव में ईश्वर के अलावा किसी और से अपनी मांगें मांगना है। वहाबी अपनी इस बात के लिए सूरए जिन्न की आयत संख्या 18 की ओर संकेत करते हैं जिसमें आया है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से न मांगो। इसी प्रकार सूरए ग़ाफ़िर की आयत संख्या 60 में आया है कि मुझसे दुआ करो मैं स्वीकार करूंगा।

सूरए जिन्न की अट्ठारहवीं आयत में पवित्र क़ुरआन मुसलमानों से मांग करता है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से न मांगो, इस प्रकार से उसने ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य की उपासना के विषय को प्रस्तुत किया है क्योंकि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और की उपासना और उसके लिए सजदा और रूकअ करना, अनकेश्वरवाद है और इस कार्य को अंजाम देने वाला अनेकेश्वरवादी होगा किन्तु यहां पर यह बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ईश्वर के निकटवर्ती बंदों से शिफ़ाअत की इच्छा, उनकी उपासना के अर्थ में नहीं है बल्कि जो भी शिफ़ाअत की

इच्छा रखता है उसे यह पूर्ण रूप से ज्ञात होता है कि केवल ईश्वर की अनुमति से ही शिफ़ाअत संभव है। इस प्रकार के लोग ईश्वर के निकटवर्ती लोगों और सच्चे, निष्ठावान और मोमिन बंदों को मध्यस्थ बनाते हैं ताकि वे ईश्वर के निकट उसके लिए दुआ करें क्योंकि ईश्वर अपने पैग़म्बरों और निकटवर्ती बंदों की दुआओं को कभी भी रद्द नहीं करता।

यदि कोई व्यक्ति ईश्वरीय दूतों से यह चाहे कि वे उसके लिए दुआ करें ताकि ईश्वर उसके पापों को क्षमा कर दे या उसके मन की इच्छा को पूरा कर दे तो उसने कभी भी ईश्वरीय दूतों को ईश्वर के समान नहीं समझा बल्कि केवल उसने उन्हें मध्यस्थ बनाया है। इस्लाम धर्म के प्रसिद्ध विद्वान और पवित्र क़ुरआन के व्याख्याकार अल्लामा तबातबाई इस आस्था के संबंध में कहते हैं कि इमाम से अपनी मांगों का मांगना उसी समय अनेकेश्वरवाद समझा जाएगा जब दुआ मांगने वाला इमाम को ईश्वर की भांति प्रभावी और अपार शक्ति का स्वामी समझे किन्तु उसे यह ज्ञात है कि समस्त चीज़ें ईश्वर के हाथ में है और केवल वही प्रभावी है, इमाम को केवल मध्यस्था या माध्यम समझता है, तो इसमें अनेकेश्वरवाद की कोई बात ही नहीं है।

अब्दुल वह्हाब की ओर से इस्लाम के नाम पर फैलायी गयीं भ्रष्ट आस्थाएं, इस्लाम धर्म की मान्यता प्राप्त हदीसों, कथनों और शिक्षाओं से बहुत ही सरलता से अपमानित और खंडित हो जाती हैं। वास्तविकता यह है कि मुहम्मद इब्ने अब्दुलवह्हाब और इसी प्रकार इब्ने तैमिया उपासना की गहराई को समझ ही नहीं सके हैं। उन्होंने यह समझा या यह दिखाने का प्रयास किया कि ईश्वर के सच्चे और शिष्टाचारी बंदों से शिफ़ाअत की मांग करना, उनकी उपासना के अर्थ में है। उन्हें ज्ञात ही नहीं है कि मूल उपासना, ईश्वर के समक्ष पूर्ण रूप से विनम्र और नतमस्तक होना है और शालीन व योग्य लोगों के सम्मान और उनसे विनम्रभाव से दुआ करने की गणना उपासना में नहीं होती। विशेषकर यदि यह लोग ईश्वरीय दूत और पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजन हों, जो स्वयं ईश्वर की उपासना और आज्ञापालन के आदर्श हैं।

वहाबियों ने शिफ़ाअत की रद्द में जो तर्क प्रस्तुत किए हैं उनमें से एक यह है कि उनका मानना है कि शिफ़ाअत का अधिकार केवल ईश्वर को है और उसके अतिरिक्त किसी को भी इस प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं है। उन्होंने अपने दावे की पुष्टि के लिए पवित्र क़ुरआन के सूरए ज़ुमर की आयत संख्या 43 और 44 को पेश किया जिसमें आया है कि क्या उन लोगों ने ईश्वर को छोड़कर सिफ़ारिश करने वाले चुन लिए हैं तो आप उनसे कह दीजिए कि ऐसा क्यों है, चाहे इन लोगों

के बस में कुछ न भी हो और किसी प्रकार की बुद्धि न रखते हों? आप कह दीजिए कि शिफ़ाअत का पूरा अधिकार अल्लाह के हाथों में है, उसी के पास धरती और आकाश का सारा प्रभुत्व है और इस के बाद तुम भी उसी की ओर पलटाए जाओगे।

इस आयत का यह तात्पर्य नहीं है कि आप कहें कि केवल और केवल ईश्वर ही शिफ़ाअत करता है और किसी को शिफ़ाअत करने का अधिकार नहीं है क्योंकि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि सैद्धांतिक रूप से ईश्वर कभी भी किसी की किसी के निकट सिफ़ारिश नहीं करता, ईश्वर इन सब चीज़ों से महान और बड़ा है। बुद्धि भी इस विषय को स्वीकार नहीं करती कि हम यह कहें कि ईश्वर अमुक व्यक्ति का मध्यस्थ बना कि उसके पाप क्षमा कर दिए गये क्योंकि इसके तुरंत बाद मन में यह प्रश्न उठता है कि ईश्वर किसके निकट मध्यस्थ बना? इस आयत में चर्चा का बिन्दु यह है कि ईश्वर स्वामी और सिफ़ारिश स्वीकार करने वाला है और वह जिसमें भी योग्यता और शालीनता देखता है उसे इस बात की अनुमति देता है कि अमुक व्यक्ति की सिफ़ारिश करे। इस स्थिति में इस आयत का वहाबियों के दावों से दूर दूर का भी संबंध नहीं है क्योंकि इस आयत में उन लोगों और उन वस्तुओं के बारे में बात हो रही है जिनमें बुद्धि या सोचने की शक्ति नहीं है जबकि ईश्वरीय दूत और ईश्वर के निकटवर्ती बंदे इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ हैं।

पैग़म्बरे इस्लाम (स) के काल से अब तक मसलमान केवल ईश्वर को ही शिफ़ाअत का स्वामी और उसे स्वीकार करने वाला समझते थे न उनके उतराधिकारियों और उनके निकटवर्ती साथियों को। मुसलमानों का यह मानना था कि शिफ़ाअत वही कर सकता है जिसे ईश्वर ने अनुमति दी हो और पवित्र क़ुरआन की आयतों और हदीसों में भी यह मिलता है कि ईश्वर ने पैग़म्बर को शिफ़ाअत करने की अनुमति दी है। इस प्रकार से पैग़म्बरे इस्लाम (स) से शिफ़ाअत की अनुमति पाने वाले के रूप में शिफ़ाअत की गुहार लगाते हैं।

तिरमीज़ी और बुख़ारी जैसे सुन्नी समुदाय के दिग्गज धर्मगुरूओं ने अपनी हदीसों की किताबों में कभी भी शिफ़ाअत को अनेकेश्वरवाद नहीं कहा। सोनने तिरमीज़ी सुन्नी मुसलमानों के निकट हदीस की एक मान्यता प्राप्त और सुन्नी समुदाय के स्रोत सहाये सित्ता में शामिल एक पुस्तक है जिसको मुहम्मद तिरमीज़ी ने लिखा था। मुहम्मद तिरमीज़ी इस पुस्तक में शिफ़ाअत के बारे में अनस बिन मालिक के हवाले से लिखते हैं कि मैंने पैग़म्बरे इस्लाम (स) से कहा कि प्रलय के दिन मेरी शिफ़ाअत करें, उन्होंने स्वीकार कर लिया और कहा कि मैं यह काम करूंगा। मैंने पैग़म्बरे इस्लाम से कहा कि मैं आपको कहां ढूंढूगा? तो उन्होंने कहा कि सेरात के पुल के पास।

अनस ने पूरे विश्वास के साथ पैग़म्बरे इस्लाम से अपनी शिफ़ाअत करने को कहा और पैग़म्बरे इस्लाम ने भी उन्हें इसका वचन दिया। यदि अनस को यह ज्ञात होता कि शिफ़ाअत अनेकेश्वरवाद है तो वह कभी भी पैग़म्बरे इस्लाम से शिफ़ाअत के लिए न कहते और पैग़म्बरे इस्लाम कभी भी उनको शिफ़ाअत का वचन न देते।

पैग़म्बरे इस्लाम के अन्य साथी जिन्होंने उनसे शिफ़ाअत की इच्छा प्रकट की सवाद बिना आज़िब हैं। उन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम की प्रशंसा में शेर कहे और शेर में ही उन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम से शिफ़ाअत की मांग की। उनके शेर का अनुवाद हैः हे पैग़म्बर प्रलय के दिन मेरी शिफ़ाअत करने वाले बनें, जिस दिन किसी अन्य की शिफ़ाअत खजूर की गुठली के चीरे की मात्रा में भी सवाद बिन आज़िब के काम नहीं आएगी।

सलफ़ी मत के वैचारिक गुरू इस प्रकार की हदीसों की ओर संकेत नहीं करते और उसकी व्याख्या नहीं करते जैसे सूरए निसा की 64वीं आयत, जिसमें शिफ़ाअत के विषय को स्पष्ट शब्दों में पेश किया गया है। इस आयत में हम पढ़ते हैं कि और हमने किसी पैग़म्बर को भी नहीं भेजा किन्तु केवल इसलिए कि ईश्वरीय

आदेश से उसका अनुसरण किया जाए और काश जब उन लोगों ने अपनी आत्मा पर अत्याचार किया था तो आप उनके पास आते और स्वयं भी अपने पापों के लिए क्षमा करते और पैग़म्बर भी उनके लिए पापों की क्षमा करते तो यह ईश्वर को बड़ा ही तौबा स्वीकार करने वाला और दयालु पाते।

इस आयत में ईश्वर स्पष्ट शब्दों में बंदो के पापों को क्षमा करने के लिए अपने पैग़म्बर को माध्यम व मध्यस्थ बताता है। सुन्नी समुदाय के बड़े धर्मगुरू फ़रूद्दीन राज़ी अपनी पुस्तक तफ़सीरे कश्शाफ़ में इस संबंध में लिखते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम ने उनके लिए क्षमा याचना की। इसका उद्देश्य पैग़म्बरे इस्लाम के स्थान को श्रेष्ठ करना है। यह इस अर्थ में है कि वे लोग उस व्यक्ति के पास आए जो श्रेष्ठ स्थान पर असीन और ईश्वर का दूत है। अनदेखे संसार की वास्तविकता उस पर ईश्वरीय आदेश वहि द्वारा उतरती हैं और ईश्वर के बंदों के बीच ईश्वर का प्रतिनिधि है क्योंकि वह उस श्रेष्ठ स्थान का स्वामी है जिसमें उनकी शिफ़ाअत रद्द नहीं होगी।

जबकि ईश्वर ने स्वयं ही स्पष्ट रूप से यह अधिकार अपने पैग़म्बर को दिया है फिर वहाबी क्यों इसे रद्द करते हैं? यहां पर उचित है कि इबने तैमिया की वह बात भी सुना जाए जिसमें वह कहता है कि ईश्वर ने अपने निकटवर्ती बंदों को

शिफ़ाअत का अधिकार दिया है किन्तु हमें इसकी मांग से रोका है। यह औचित्य इस बात का सूचक है कि शिफ़ाअत के विषय में सलफ़ी बंद गली में पहुंच गये हैं क्योंकि ईश्वर ने सूरए निसा की 64वीं आयत में अपने बंदों से कहा है कि वह पैग़म्बर से शिफ़ाअत की मांग करें। इस बात के अतिरिक्त क्या यह संभव है कि ईश्वर किसी को किसी वस्तु का अधिकार दे और उसके प्रयोग से उसे रोक दे? इस बात में ही स्पष्ट रूप से विरोधाभास है? यदि ईश्वर ने यह अधिकार अपने निकटवर्ती बंदों को दिया है तो यह इस अर्थ में है कि दूसरे इस अधिकार से लाभान्वित हों, न यह कि इसकी मांग ही न करें। यहां पर एक कहने को दिल चाह रहा है कि सलफ़ियों की हर बातों व तर्कों में सदैव बहुत अधिक विरोधाभास पाया जाता है जो इस बात की निशानी है कि इस पथभ्रष्ट संप्रदाय का तर्क बहुत ही कमज़ोर है।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-11

पिछले लेख में हमने कहा कि जिन विषयों के बारे में वहाबियों ने अत्यधिक हो हल्ला मचाया है उनमें से एक ईश्वर के प्रिय बंदों से तवस्सुल या अपने कार्यों के लिए उनके माध्यम से ईश्वर से सिफ़ारिश करवाना है। सलफ़ी, तवस्सुल को एकेश्वरवाद के विरुद्ध बताते हैं और उनका कहना है कि ऐसा करने वाला अनेकेश्वरवादी है। अलबत्ता यह भी इस कट्टरपंथी मत की वैचारिक पथभ्रष्टताओं में से एक है क्योंकि क़ुरआने मजीद की आयतों और पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के कथनों का तनिक भी ज्ञान रखने वाला हर समझदार व्यक्ति जानता है कि तवस्सुल न केवल यह कि एकेश्वरवाद से विरोधाभास नहीं रखता बल्कि यह अन्नय ईश्वर से निकट होने का माध्यम है और इसी कारण मुसलमान पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वर के अन्य प्रिय बंदों से तवस्सुल करते हैं ताकि कृपाशील उनके महान स्थान के वास्ते से उन पर कृपा दृष्टि डाले और उनकी प्रार्थनाओं को स्वीकार करे।

हर मुसलमान जानता है कि ईश्वर अनन्य है और वही विश्व की सभी वस्तुओं का स्रोत और हर घटना का मूल आधार है। इसी प्रकार ब्रह्मांड की समस्त वस्तुएं केवल ईश्वर की इच्छा और अनुमति से ही प्रभाव स्वीकार करती हैं। क़ुरआने मजीद ने अपनी रोचक शैली में बड़े ही सुंदर ढंग से इस बात को बयान किया है।

सूरए अनफ़ाल की सत्रहवीं आयत में वह पैग़म्बरे इस्लाम को संबोधित करते हुए कहता हैः याद कीजिए उस समय को जब आपने (युद्ध में) तीर चलाया, तो वस्तुतः आपने नहीं बल्कि ईश्वर ने तीर चलाया। इस आयत में पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम द्वारा तीर चलाए जाने का मुख्य कारक ईश्वर को बताया गया है। अर्थात तीर पैग़म्बर ने भी चलाया और ईश्वर ने। यह आयत सभी को यह बताना चाहती है कि हर कार्य का मुख्य कारक ईश्वर है और सभी बातें व घटनाएं उसी की इच्छा से होती हैं तथा इस आयत में पैग़म्बर उस कार्य अर्थात तीर चलाने का माध्यम हैं।

उदाहरण स्वरूप मनुष्य क़लम द्वारा कोई बात लिखे तो क़लम इस बात का माध्यम होता है कि मनुष्य उसके द्वारा लिखने का काम करे। अब प्रश्न यह है कि क्या लिखने के समय मनुष्य और क़लम दोनों का रुतबा और स्थान एक ही है? खेद के साथ कहना पड़ता है कि वहहाबी मत के लोग तवस्सुल के संबंध में भी शेफ़ाअत की ही भांति भ्रांति व पथभ्रष्टता का शिकार हो गए हैं और माध्यम व अनन्य ईश्वर को एक ही समझ बैठे हैं। इसी आधार पर उन्होंने मुसलमानों को काफ़िर एवं अनेकेश्वरवादी बताया है जबकि तवस्सुल, पैग़म्बरों को ईश्वर का समकक्ष बताने नहीं अपित पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम

जैसे पवित्र लोगों को अनन्य ईश्वर के समक्ष अपनी प्रार्थनाओं की स्वीकृति के लिए माध्यम बनाने को कहते हैं।

ईश्वर का सामिप्य, बंदगी के मार्ग में मनुष्य के लिए सबसे उच्च एवं सम्मानीय दर्जा है। क़ुरआने मजीद ने सूरए माएदा की 35वीं आयत में स्पष्ट रूप से कहा है कि माध्यम व साधन के बिना ईश्वर का सामिप्य प्राप्त नहीं किया जा सकता है। वह कहता है। हे ईमान वालो! ईश्वर (के आदेश के विरोध) से डरो और (उससे सामिप्य के लिए) साधन जुटाओ तथा उसके मार्ग में जेहाद करते रहो कि शायद तुम्हें मोक्ष प्राप्त हो जाए। इस आयत में, जिसके संबोधन के पात्र ईमान वाले हैं, मोक्ष व कल्याण के लिए तीन विशेष आदेश दिए गए हैं। ये तीन आदेश हैं, ईश्वर से भय, ईश्वर से सामिप्य के लिए साधन जुटाना और ईश्वर के मार्ग में जेहाद करना। अब प्रश्न यह है कि इस आयत में साधन से तात्पर्य क्या है? इस आयत में साधन का अर्थ अत्यंत व्यापक है किंतु हर स्थिति में कोई वस्तु या व्यक्ति होना चाहिए जो प्रेम व उत्साह के साथ ईश्वर से सामिप्य का कारण बने। ईश्वर तथा उसके पैग़म्बर पर ईमान, जेहाद तथा नमाज़, ज़कात, रोज़ा व हज जैसी उपासनाएं तथा दान दक्षिणा व परिजनों से मेल-जोल जैसी बातें भी ईश्वर से सामिप्य का कारण हो सकती हैं। पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम, उनके उत्तराधिकारियों तथा ईश्वर के प्रिय बंदों से तवस्सुल भी इन्हीं

उपासनाओं की भांति है और क़ुरआने मजीद की आयतों के अनुसार वह भी ईश्वर से सामिप्य का कारण बनता है।

क़ुरआने मजीद की कुछ आयतों में कहा गया है कि पैग़म्बर भी ईश्वर के बंदों पर कृपा करते हैं। सूरए तौबा की 59वीं आयत में कहा गया है। और यदि जो कुछ ईश्वर और उसके पैग़म्बर ने उन्हें प्रदान किया है उस पर वे प्रसन्न रहते और कहते कि ईश्वर हमारे लिए काफ़ी है, ईश्वर और उसके पैग़म्बर शीघ्र ही अपनी कृपा से हमें प्रदान करेंगे और हम ईश्वर की ओर से आशावान हैं (तो निश्चित रूप से यह उनके लिए बेहतर होता)। जब स्वयं क़ुरआन ने पैग़म्बर को प्रदान करने वाला बताया है तो फिर हम उनसे सहायता क्यों न चाहें और उनके उच्च स्थान को ईश्वर के समक्ष माध्यम क्यों न बनाएं? यही कारण है कि दयालु व कृपालु ईश्वर सूरए निसा की 64वीं आयत में मुसलमानों को पैग़म्बरे इस्लाम से सिफ़ारिश करवाने और उन्हें माध्यम बनाने हेतु प्रोत्साहित करता है। इस आयत में पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम को संबोधित करते हुए कहा गया हैः और जब उन्होंने अपने आप पर अत्याचार किया और ईश्वरीय आदेश की अवज्ञा की थी तो यदि वे आपके पास आते और ईश्वर से क्षमा याचना करते और पैग़म्बर भी उन्हें क्षमा करने की सिफ़ारिश करते तो निसंदेह वे ईश्वर को बड़ा तौबा स्वीकार करने वाला और दयावान पाते।

वह्हाबी मत के लोगों ने तवस्सुल का इन्कार करने के लिए क़ुरआने मजीद की कुछ आयतों को प्रमाण में प्रस्तुत किया है। उदाहरण स्वरूप वे सूरए फ़ातिर की 14वीं आयत को प्रस्तुत करते हैं जिसमें कहा गया हैः (हे पैग़म्बर!) यदि आप उन्हें पुकारें तो वे आपकी पुकार नहीं सुनेंगे और यदि वे सुनें भी तो आपकी बात स्वीकार नहीं करेंगे और प्रलय के दिन वे आपके समकक्ष ठहराने (और उपासना) का इन्कार कर देंगे। और (जानकार ईश्वर की) भांति कोई भी आपको (तथ्यों से) सूचित नहीं करता। सूरए फ़ातिर में मूर्तियों की पूजा करने वालों को संबोधित करती हुई कई आयतें हैं और यह आयत भी उन्हें मूर्तियों की पूजा से रोकती है क्योंकि मूर्तियां न तो अपनी उपासना करने वालों की प्रार्थनाएं सुन सकती हैं और यदि सुन भी सकतीं तो उन्हें पूरा करने का उनमें सामर्थ्य नहीं है और न ही संसार में उनका तनिक भी कोई स्वामित्व है किंतु कुछ अतिवादी वह्हाबियों ने तवस्सुल व शेफ़ाअत के माध्यम से पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम तथा ईश्वर के अन्य प्रिय बंदों से मुसलमानों के संपर्क को समाप्त करने के लिए इस आयत और इसी प्रकार की अन्य आयतों का सहारा लिया है और कहा है कि ईश्वर को छोड़ कर पैग़म्बरों सहित वे सभी लोग, जिन्हें तुम पकारते हो, तुम्हारी बात नहीं सुनते हैं और यदि सुन भी लें तो उसे पूरा नहीं कर सकते। या इसी प्रकार सूरै आराफ़ की आयत क्रमांक 197 में कहा गया हैः और जिन्हें तुम

ईश्वर के स्थान पर पुकारते हो वे न तो तुम्हारी सहायता कर सकते हैं और न ही अपनी रक्षा कर सकते हैं। वह्हाबी इसी प्रकार की अन्य आयतें प्रस्तुत करके पैग़म्बरों और इमामों से हर प्रकार के तवस्सुल का इन्कार कर देते हैं और इसे एकेश्वरवाद के विपरीत बताते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि इन आयतों से पहले और बाद वाली आयतों पर एक साधारण सी दृष्टि डाल कर भी इस वास्तविकता को समझा जा सकता है कि इन आयतों का तात्पर्य मूर्तियां हैं क्योंकि इन सभी आयों में उन पत्थरों और लकड़ियों की बात की गई है जिन्हें ईश्वर का समकक्ष ठहराया गया था और उन्हें ईश्वर की शक्ति के मुक़ाबले में प्रस्तुत किया गया था।

कौन है जो यह न जानता हो कि पैग़म्बर और ईश्वर के प्रिय बंदे ईश्वर के मार्ग में शहीद होने वाले उन लोगों की भांति हैं जिनके बारे में क़ुरआन स्पष्ट रूप से कहता है कि वे जीवित हैं। दूसरी ओर इस बात में भी कोई संदेह नहीं है कि इन पवित्र हस्तियों से तवस्सुल का अर्थ यह नहीं है कि हम इन्हें ईश्वर के मुक़ाबले में स्वाधीन शक्ति का स्वामी समझते हैं बल्कि लक्ष्य है कि उनके सम्मान और स्थान के माध्यम से ईश्वर से सहायता चाहें और ईश्वर की दृष्टि में उनकी जो महानता है उसके द्वारा ईश्वर से यह चाहें कि वह हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर ले और यह बात एकेश्वरवाद और ईश्वर की बंदगी से तनिक भी

विरोधाभास नहीं रखती बल्कि यही एकेश्वरवाद है। इस आधार पर जैसा कि क़ुरआने मजीद ने सूरए बक़रह की आयत क्रमांक 255 में सिफ़ारिश के संबंध में स्पष्ट रूप से कहा है कि कोई भी ईश्वर की अनुमति और आदेश के बिना सिफ़ारिश नहीं कर सकता, ठीक उसी प्रकार उनसे तवस्सुल भी इसी माध्यम से होता है और ईश्वर की अनुमति के बिना नहीं हो सकता। यही कारण है कि ईश्वर अपने पैग़म्बर के माध्यम से एक कथन में कहता है कि जान लो कि जिस किसी की कोई समस्या है और वह उसे दूर करना तथा कोई लाभ प्राप्त करना चाहता है या किसी अत्यंत जटिल व हानिकारक घटना में ग्रस्त हो गया है और चाहता है कि वह समाप्त हो जाए तो उसे चाहिए कि मुझे मुहम्मद व उनके पवित्र परिजनों के माध्यम से पुकारे ताकि मैं उसकी प्रार्थनाओं को उत्तम ढंग से स्वीकार करूं।

यही कारण है कि हम पैग़म्बरे इस्लाम के काल के वरिष्ठ मुसलमानों तथा अन्य धार्मिक नेताओं की जीवनी में देखते हैं कि वे समस्याओं के समय पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की क़ब्र पर जाते, उनसे तवस्सुल करते तथा उनकी पवित्र आत्मा के माध्यम से ईश्वर से सहायता चाहते थे। इस संबंध में बहुत सी हदीसें हैं जिन्हें शीया और सुन्नी दोनों की विश्वस्त किताबों में देखा जा सकता है। इब्ने हजरे मक्की ने अपनी किताब सवाएक़े मुहरिक़ा में प्रख्यात सुन्नी धर्मगुरू इमाम शाफ़ेई के हवाले से लिखा कि वे पैग़म्बरे इस्लाम के

परिजनों की प्रशंसा में कविजाएं लिख कर उनसे तवस्सुल करते थे और कहते थे कि पैग़म्बर के परिजन मेरे माध्यम हैं, वे ईश्वर से सामिप्य के लिए मेरा साधन हैं, मुझे आशा है कि प्रलय के दिन उन्हीं के कारण मेरा कर्मपत्र मेरे सीधे हाथ में दिया जाएगा और मुझे मोक्ष प्राप्त होगा।

तवस्सुल की एक अन्य घटना पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की पत्नी हज़रत आएशा से संबंधित है। अबुल जोज़ा के हवाले से दारमी ने अपनी पुस्तक सहीह में लिखा कि एक वर्ष मदीना नगर में भारी अकाल पड़ा। हज़रत आएशा ने लोगों से कहा कि वे अकाल की समाप्ति के लिए पैग़म्बरे इस्लाम से तवस्सुल करें। उन्होंने ऐसा ही किया और फिर जम कर वर्षा हुई तथा अकाल समाप्त हो गया। सुन्नी मुसलमानों की सबसे विश्वस्त किताब सहीह बुख़ारी में वर्णित है कि दूसरे ख़लीफ़ा उमर ने अकाल व सूखे के समय पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के चाचा अब्बास से तवस्सुल किया और कहा कि प्रभुवर! जब भी हम अकाल में ग्रस्त होते थे तो पैग़म्बरे इस्लाम से तवस्सुल किया करते थे और वर्षा होने लगती थी अब मैं तुझे उनके चाचा अब्बास का वास्ता देता हूं ताकि तू वर्षा को भेज दे। बुख़ारी ने लिखा है कि इसके बाद वर्षा होने लगी। सुन्नियों के एक बड़े धर्मगुरू आलूसी ने क़ुरआने मजीद की व्याख्या में लिखी गई अपनी किताब में तवस्सुल के संबंध में बड़ी संख्या में

हदीसों का वर्णन किया है। वे इन हदीसों की लम्बी व्याख्या और तवस्सुल से संबंधित हदीसों के बारे में कड़ा रुख़ अपनाने के बाद अंत में कहते हैं कि इन सारी बातों के बावजूद मेरी दृष्टि में ईश्वर के निकट पैग़म्बरे इस्लाम से तवस्सुल में किसी प्रकार की कोई रुकावट नहीं है, चाहे उनके जीवन में हो अथवा मृत्यु के पश्चात। इसके बाद आलूसी ने यह भी लिखा है कि ईश्वर को पैग़म्बर के अतिरिक्त भी किसी अन्य का वास्ता देने में कोई रुकावट नहीं है किंतु उसकी शर्त यह है कि वह वास्तव में ईश्वर के निकट उच्च स्थान रखता हो।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-12

ज़ियारत व दर्शन का इस्लाम में विशेष स्थान है और वह मुसलमानों के निकट एक अच्छा कार्य है। मुसलमान शफ़ाअत अर्थात प्रलय के दिन सिफारिश/ तवस्सुल अर्थात सहारा व माध्यम और भले लोगों की क़ब्रों के सम्मान को ऐसी चीज़ मानते हैं जिसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं है। पैग़म्बरे इस्लाम और ईश्वर पर ईमान रखने वालों की क़ब्रों का दर्शन मुसलमानों के मध्य प्रचलित है यहां तक कि मुसलमान, महान धार्मिक हस्तियों की क़ब्रों पर ईश्वर से प्रार्थना व दुआ करते हैं। उदाहरण स्वरुप अतीत में हाजी लोग ओहद नामक युद्ध में शहीद होने वाले पैग़म्बरे इस्लाम के चाचा और शहीदों के सरदार हज़रत हम्ज़ा की क़ब्र की मिट्टी से तस्बीह अर्थात माला बनाते थे। ६ठीं हिजरी क़मरी के महान शायर ख़ाक़ानी

शेरवानी अपने एक शेर में वर्तमान इराक़ में स्थित मदायन नगर में पैग़म्बरे इस्लाम के महान साथी सलमान फारसी की समाधि का दर्शन करने वालों से सिफारिश करते हैं कि वे सलमान फार्सी की क़ब्र से तसबीह बनायें क्योंकि इन महान हस्तियों की पवित्र क़ब्र की मिट्टी आध्यात्मिक मूल्य व महत्व रखती है।

सलफी एवं वहाबी पंथ की बुनियाद रखने वाला इब्ने तय्मिया पैग़म्बरे इस्लाम की पावन समाधि के दर्शन को हराम और क़ब्र का दर्शन करने के इरादे से की जाने वाली यात्रा को भी हराम समझता है। वह मिनहाजुस्सुन्नत नामक अपनी पुस्तक में कोई तर्कसंगत कारण बयान किये बिना लिखता है ""क़ब्रों का दर्शन करने के बारे में पैग़म्बरे इस्लाम से जो हदीसें अर्थात कथन आये हैं वे सबके सब झूठे हैं और सबके सही होने का प्रमाण कमज़ोर है। इब्ने तय्मिया इसी प्रकार कहता है" " पैग़म्बरे इस्लाम या उनके अतिरिक्त किसी और की क़ब्र के दर्शन का अर्थ ईश्वर के सिवा किसी और को बुलाना है तथा ईश्वरीय कार्यों में दूसरे को भी उसका सहभागी मानना है और यह कार्य हराम एवं अनेकेश्वरवाद है" जबकि पैग़म्बरे इस्लाम और महान धार्मिक हस्तियों की क़ब्र का दर्शन ईश्वर के निकट उनके उच्च स्थान के कारण है न कि उसके कार्यों में किसी को उसका सहभागी बनाना है।

वहाबी पंथ की बुनियाद रखने वाले इब्ने तय्मिया और मोहम्मद इब्ने अब्दुल वह्हाब शीया मुसलमानों पर आक्रमण करते और उन पर आरोप लगाते हैं कि शीया अपने इमामों की क़ब्रों एवं उनकी समाधियों के दर्शन को हज से भी बड़ा कार्य समझते हैं! मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब अपनी पुस्तक कश्फ़ुश्शुबहात में उस सम्मान को, जो शीया मुसलमान पैग़म्बरों, इमामों और महान हस्तियों की क़ब्रों की करते हैं, बहाना बनाता है कि शीया मुसलमान ईश्वर का सहभागी मानते हैं और वह अनेकेश्रवाद पर विश्वास रखते हैं। वास्तव में इब्ने तय्मिया , मोहम्मद इब्ने अब्दुल वह्हाब और उनके अनुयाइयों की एक सबसे बड़ी कमज़ोरी व समस्या यह है कि वे धर्म के बारे में अपने भ्रष्ठ विचारों को एकेश्वरवाद तथा दूसरों के अनेकेश्वरवाद का मापदंड मानते हैं। वे ईश्वरीय धर्म इस्लाम के बारे में अपने ग़लत निष्कर्ष को दूसरों के विश्वासों पर थोपते हैं जबकि पवित्र क़ुरआन, इस्लामी शिक्षाएं और विश्वस्त मुसलमान धर्मगुरू उनके विचारों से भिन्न दृष्टिकोण रखते हैं। क़ब्रों के दर्शन के बारे में पैग़म्बरे इस्लाम कहते हैं" कि क़ब्रों को देखने जाओ कि वह तुम्हें परलोक की याद दिलाती है" । इसी तरह पैग़म्बरे इस्लाम एक अन्य स्थान पर कहते हैं" क़ब्रों को देखने जाओ क्योंकि उसमें तुम्हारे लिए सीख है।

मनुष्य क़ब्रों को देखकर अपनी अक्षमता को समझ जाता है और भौतिक शक्तियों के नष्ट होने को निकट से देखता है। समझदार मुसलमान क़ब्रों को

देखकर समझ जाता है कि शीघ्र समाप्त हो जाने वाले जीवन को बेखबरी एवं निश्चेतना से बर्बाद नहीं करना चाहिये बल्कि थोडे से जीवन के समय का सदुपयोग करके परलोक के लिए कुछ करना चाहिये।

पैग़म्बरे इस्लाम और उनके पवित्र परिजनों के रौज़ों में उपस्थिति एक प्रकार से लोगों के मार्गदर्शन के लिए उठाई गयी उनकी कठिनाइयों व त्यागों के प्रति आभार और उनके वचनों के पालन के प्रति दोबारा वचनबद्धता है। पैग़म्बरे इस्लाम और उनके पवित्र परिजनों की क़ब्रों का दर्शन करने वाला वास्तव में उनके साथ एक प्रकार की प्रतिज्ञा करता है कि वह उनके बताये गये मार्ग के अतिरिक्त जीवन में किसी अन्य मार्ग पर नहीं चलेगा।

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि क़ब्रों को देखने जाना पैग़म्बरे इस्लाम का आचरण है। सुन्नी मुसलमानों की किताबों में लिखा हुआ है कि पैग़म्बरे इस्लाम अपनी माता हज़रत आमिना की क़ब्र पर जाकर रोया करते थे। इसी प्रकार अबु हुरैरा के हवाले से लिखा है कि पैग़म्बरे इस्लाम अपनी माता की क़ब्र का दर्शन करते, वहां पर रोते और दूसरों भी रुलाते और कहते थे कि" क़ब्रों को देखने जाओ क्योंकि क़ब्र देख कर मौत की याद आ जाती है।" पैग़म्बरे इस्लाम एक

अन्य स्थान पर कहते हैं" " क़ब्रों का देखना सहानुभूति, आंखों से आंसू निकलने और परलोक की याद का कारण बनता है तो क़ब्रों को देखने जाओ"

पवित्र क़ुरआन के सूरये तकासुर में महान ईश्वर अनेकेश्वरवादियों के उस गुट की ओर संकेत करता है जो क़ब्रों को देखने तो गया परंतु सीख लेने के उद्देश्य से नहीं। सूरये तकासुर की पहली और दूसरी आयत में हम पढ़ते हैं जिसमें ईश्वर कहता है" धन एवं कुल की बहुतायत ने तुम लोगों को ईश्वर की याद से निश्चिंत बना रखा है यहां तक कि तुम लोगों ने अपने मरे हुए लोगों की क़ब्र को गिना"

" स्पष्ट है कि सर्वसमर्थ व महान ईश्वर क़ब्रों की गणना करके उस पर गर्व करने को बिल्कुल पसंद नहीं करता परंतु क़ब्रों को देखने से किसी प्रकार मना नहीं करता। सातंवी हिजरी क़मरी के प्रसिद्ध पवित्र क़ुर्आन के व्याख्याकर्ता मोहम्मद क़ुरतबी इन आयतों के संदर्भ में कहते हैं" "क़ब्रों का देखना कठोर हृदयों के लिए सर्वोत्तम औषधि है क्योंकि क़ब्रों का देखना मौत और परलोक की याद का कारण है तथा मौत एवं परलोक की याद आकांक्षाओं के कम होने तथा दुनिया से विरक्तता और उसमें बाक़ी रहने की कामना छोड़े देने का कारण बनता है।

ईश्वरीय दूतों की पवित्र क़ब्रों के दर्शन के बारे में इब्ने तय्मिया की बातों से कुछ चीज़ें निष्कर्ष के रूप में निकलती हैं। पहली चीज़ यह है कि वह पैग़म्बरों व ईश्वरीय दूतों की क़ब्रों के दर्शन को हराम समझता है। इसी प्रकार वह कहता है कि जो व्यक्ति पैग़म्बरों और भले लोगों की क़ब्रों का दर्शन करने, वहां पर नमाज़ पढ़ने और दुआ करने के उद्‌देश्य से यात्रा करने का इरादा करे तो ऐसे व्यक्ति ने हराम कार्य करने का इरादा किया है और उसे चाहिये कि वह नमाज़ पूरी पढ़े। इब्ने तय्मिया इस प्रकार की यात्रा को पाप समझता है जबकि वह यात्रा हराम होती है जिसमें हराम कार्य किया जाये। उदाहरण स्वरूप शराब बेचने या लोगों के धन को लूटने के लिए की जाने वाली यात्रा हराम है। इस आधार पर इब्ने तय्मिया की बात के इस भाग में भी स्पष्ट किया गया है कि पैग़म्बरों और ईश्वरीय दूतों की क़ब्रों का दर्शन पाप व हराम है। उल्लेखनीय है कि इस प्रकार के विचार न केवल ग़लत एवं आधारहीन हैं बल्कि बहुत बुरे व शिष्टाचार से परे हैं। नवीं हिजरी क़मरी के सुन्नी मुसलमानों के वरिष्ठ मिस्री धर्मगुरू इब्ने हजर अस्क़लानी अपनी पुस्तक "फत्हुल बारी" में कहते हैं कि" आश्चर्य उन लोगों से है जो इब्ने तय्मिया को निर्दोष व बरी दिखाने का प्रयास करते हैं और उक्त बातों को इब्ने तय्मिया पर आरोप मानते एवं कहते हैं" इब्ने तय्मिया ने केवल दर्शन के इरादे से की जाने वाली यात्रा को हराम कहा है न कि पैग़म्बरे इस्लाम की क़ब्र का दर्शन बल्कि वह तो पैग़म्बरों की क़ब्रों के दर्शन को परंपरा व अच्छा कार्य मानता है।" यहां प्रश्न

यह उठता है कि किस प्रकार इब्ने तय्मिया पैग़म्बरों की क़ब्रों के दर्शन को परंपरा व अच्छा कार्य मानता है जबकि इन क़ब्रों के दर्शन के इरादे से की जाने वाली यात्रा को हराम व पाप मानता है? क्या इस प्रकार की बात में विरोधाभास नहीं है? क्या इब्ने तय्यिया द्वारा पैग़म्बरे इस्लाम के उन कथनों को झुठलाना इस बात का प्रमाण नहीं है कि वह पैग़म्बरों की क़ब्रों के दर्शन पर विश्वास नहीं रखता है? बहुत से सुन्नी विद्वानों एवं धर्मगुरूओं ने पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरे पैग़म्बरों की क़ब्रों का दर्शन करने के संबंध में इब्ने तय्यिया के फतवों का रहस्योदघाटन किया है जिसमें उसने साफ- साफ कहा है कि पैग़म्बरों की क़ब्रों का दर्शन हराम है।

इब्ने तय्मिया अपने भ्रष्ठ विचारों को सही सिद्ध करने के लिए बहुत सी रवायतों व कथनों की अनदेखी करता और झूठ बोलता है। पैग़म्बरे इस्लाम की पवित्र क़ब्र के दर्शन के बारे में बहुत से कथन और इस्लामी शिक्षाएं मौजूद हैं। इब्ने अब्बास ने कहा है कि पैग़म्बरे इस्लाम ने कहा है जो मेरे मरने के बाद मेरी क़ब्र का दर्शन करे वह उस व्यक्ति की भांति है जिसने मेरा दर्शन मेरे जीवन में किया और जो मेरे दर्शन के लिए आये और मेरी क़ब्र के किनारे पहुंच जाये तो मैं प्रलय के दिन उसके लिए गवाही दूंगा""

अब्दुल्लाह बिन उमर पैग़म्बरे इस्लाम के हवाले से कहता है" जो व्यक्ति हज करने के लिए आये और मेरे देहांत के बाद मेरी क़ब्र का दर्शन करे तो मानो जीवन में उसने मेरा दर्शन किया। अनस बन मालिक भी कहते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम ने कहा है कि जो ध्यान और मेरा दर्शन करने के इरादे से मदीना आये और मेरा दर्शन करे तो मैं प्रलय के दिन उसकी शिफाअत करूंगा और उसके हित में गवाही दूंगा। बहुत से सुन्नी धर्मगुरूओं ने यह सिद्ध करने के लिए इन कथनों का सहारा लिया है कि पैग़म्बरे इस्लाम की क़ब्र का दर्शन परम्परा व अच्छा कार्य है। राफेई अपनी पुस्तक फत्हुल अज़ीज़ में कहते हैं जो व्यक्ति हज करने जाता है उसके लिए मुस्तहब व अच्छा यह है कि ज़मज़म का पानी पीये और उसके बाद हज के संस्कारों के निर्वाह के पश्चात पैग़म्बरे इस्लाम की क़ब्र की ज़ियारत करे। क्योंकि पैग़म्बरे इस्लाम के हवाले से एक कथन बयान किया गया है जिसमें आपने कहा है कि जो व्यक्ति मेरे मरने के बाद मेरे दर्शन के लिए आयेगा वह उस व्यक्ति की भांति है जिसने मेरे जीवन में मेरा दर्शन किया है और जो व्यक्ति मेरी क़ब्र का दर्शन करे उसका प्रतिदान स्वर्ग है। पैग़म्बरे इस्लाम की पवित्र क़ब्र की ज़ियारत करने के इरादे से यात्रा करना वह चीज़ है जिसे पैग़म्बरे इस्लाम के साथी और उनके साथियों को देखने वालों ने जीवन भर किया। पैग़म्बरे इस्लाम के एक प्रतिष्ठित साथी और उनके मुअज़्ज़िन अर्थात अज़ान देने वाले बेलाल बिन रेबाह हैं जिन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम की पवित्र क़ब्र की ज़ियारत के लिए शाम अर्थात वर्तमान

सीरिया से पवित्र नगर मदीना की यात्रा की। इब्ने असाकिर कहते हैं" बेलाल ने पैग़म्बरे इस्लाम को स्वप्न में देखा कि उससे कह रहे हैं कि क्या अत्याचार है जो तुम मेरे साथ कर रहे हो? क्या वह समय नहीं आया कि तुम मेरे दर्शन के लिए आओ? बेलाल स्वप्न से उठ गये और वह क्षुब्ध व दुःखी थे तथा वह स्वयं से डर रहे थे। उसके पश्चात बेलाल घोड़े पर सवार हुए और शाम से पवित्र नगर मदीना के लिए रवाना हो गये। जब वह पैग़म्बरे इस्लाम की क़ब्र के पास पहुंच गये तो क़ब्र के किनारे रोये और अपने चेहरे को पैग़म्बरे इस्लाम की क़ब्र से मल रहे थे कि अचानक इमाम हसन और इमाम हुसैन वहां आ गये। बेलाल ने उन्हें अपनी गोद में उठा लिया और उन्हें चूमा। इमाम हसन और इमाम हुसैन ने उनसे कहा हम वैसी अज़ान सुनना चाहते हैं कि जैसी अज़ान हमारे नाना के काल में तुम भोर में दिया करते थे।

मित्रो उक्त प्रमाणों और प्रसिद्ध सुन्नी धर्मगुरूओं के कथनों के बयान के बाद यह किस तरह स्वीकार किया जा सकता है कि महान हस्तियों विशेषकर पैग़म्बरे इस्लाम की पवित्र क़ब्र का दर्शन व सम्मान हराम है? क्या इब्ने तय्मिया और मोहम्मद इब्ने अब्दुल वहहाब की ओर से उस चीज़ हो हराम बताना, जिसे ईश्वर ने हलाल व वैध कहा है, महापाप नहीं है?

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-13

पैग़म्बरों, ईश्वरीय दूतों और महान हस्तियों की क़ब्रों पर मज़ार एवं मस्जिद का निर्माण वह कार्य है जिसके बारे में वहाबी कहते हैं कि यह चीज़ धर्म में नहीं है और इसके संबंध में वे अकारण ही संवेदनशीलता दिखाते हैं। यह बात सबसे पहले वहाबियत की बुनियाद रखने वाले इब्ने तैय्मिया और उसके पश्चात उसके शिष्य इब्ने क़य्यम जौज़ी ने कही। उन्होंने क़ब्रों के ऊपर इमारत निर्माण करने को हराम और उसके ध्वस्त करने को अनिवार्य होने का फतवा दिया। इब्ने क़ैय्यम अपनी किताब ""ज़ादुल माअद फी हुदा ख़ैरिल एबाद"" में लिखता है क़ब्रों के ऊपर जिस इमारत का निर्माण किया गया है उसका ध्वस्त करना अनिवार्य है और इस कार्य में एक दिन भी विलंब नहीं किया जाना चाहिये। इस आधार पर मोहम्मद इब्ने अब्दुल वह्हाब द्वारा भ्रष्ठ वहाबी पंथ की बुनियाद रखे जाने और सऊद परिवार द्वारा उसके समर्थन के बाद पवित्र स्थलों व स्थानों पर भारी पैमाने पर आक्रमण किये गये और वहाबियों ने महत्वपूर्ण इस्लामी स्थलों को ध्वस्त करना आरंभ कर दिया। वर्ष १३४४ हिजरी क़मरी अर्थात १९२६ में वहाबियों द्वारा पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजनों और साथियों की क़ब्रों के ऊपर बने मज़ारों को ध्वस्त किये जाने को सबसे अधिक दुस्साहसी कार्य समझा जाता है जबकि वहाबी और उनके विद्वान आज तक अपने इस अमानवीय कृत्य का कोई तार्किक व धार्मिक कारण पेश नहीं कर सके हैं।

इस्लाम धर्म की निशानियों की सुरक्षा और उनका सम्मान महान ईश्वर की सिफारिश है। पवित्र क़ुरआन के सूरये हज की ३२वीं आयत में महान ईश्वर ने ईश्वरीय चिन्हों की सुरक्षा के लिए मुसलमानों का आह्वान किया है। इस संबंध में महान ईश्वर कहता है" जो भी ईश्वर की निशानियों व चिन्हों को महत्व दे तो यह कार्य दिलों में ईश्वरीय भय होने का सूचक है" जिस तरह से सफा, मरवा, मशअर, मिना और हज के समस्त संस्कारों को ईश्वरीय निशानियां बताया गया है उसी तरह पैग़म्बरों और महान हस्तियों की क़ब्रों का सम्मान भी ईश्वरीय धर्म इस्लाम के आदेशों का पालन है और यह कार्य महान ईश्वर से सामिप्य प्राप्त करने के परिप्रेक्ष्य में है। क्योंकि पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरे पैग़म्बर व ईश्वरीय दूत ज़मीन पर महान व सर्वसमर्थ ईश्ववर की सबसे बड़ी निशानी थे और इन महान हस्तियों के प्रति आदरभाव एवं उनकी प्रतिष्ठा का एक तरीक़ा उनकी क़ब्रों की सुरक्षा है। दूसरी ओर पैग़म्बरों और महान हस्तियों की क़ब्रों की सुरक्षा एवं उसका सम्मान, इस्लाम धर्म के प्रति मुसलमानों के प्रेम, लगाव और इसी तरह इन महान हस्तियों द्वारा उठाये गये कष्टों के प्रति आभार व्यक्त करने का सूचक है। पवित्र क़ुरआन ने भी इस कार्य को अच्छा बताया है और समस्त मुसलमानों को आदेश दिया है कि वे न केवल पैग़म्बरे इस्लाम बल्कि उनके पवित्र परिजनों से भी प्रेम करें। पवित्र क़ुरआन के सूरये शूरा में महान ईश्वर कहता है"" हे पैग़म्बर कह दो कि मैंने

जो ईश्वरीय आदेश तुम लोगों तक पहुंचाया है उसके बदले में मैं अपने निकट संबंधियों से प्रेम करने के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता" "

अब यहां पर पूछा जाना चाहिये कि क्या पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजनों की रचनाओं, उनके जीवन स्थलों और उनकी क़ब्रों की सुरक्षा उनके प्रति सम्मान नहीं है?

प्रिय श्रोताओ यहां यह जानना रोचक होगा कि पवित्र क़ुरआन में भी न केवल इन निशानियों की सुरक्षा की सिफारिश की गयी है बल्कि पवित्र क़ुरआन ने क़ब्रों के ऊपर इमारतों के निर्माण को वैध भी बताया है। इस बात को "असहाबे कहफ़" की एतिहासिक घटना में भी देखा जा सकता है। जब असहाबे कहफ तीन सौ वर्षों के बाद नींद से जागे और उसके कुछ समय के पश्चात वे मर गये तो दूसरे लोग आपस में बात कर रहे थे कि उनकी क़ब्र के ऊपर इमारत का निर्माण किया जाये या नहीं। उनमें से कुछ लोगों ने कहा कि इन लोगों के सम्मान के लिए उनकी कब्रों के ऊपर इमारत का निर्माण करना आवश्यक है जबकि कुछ दूसरे कह रहे थे कि उनकी क़ब्रों पर मस्जिद का निर्माण किया जाना चाहिये ताकि उनकी याद बाक़ी रहे। इस विषय का वर्णन पवित्र क़ुरआन के सूरये कहफ की २१वीं आयत में भी आया है जो इस बात का सूचक है कि ब्रह्मांड के रचयिता को भले लोगों की

क़ब्रों के ऊपर इमारत के निर्माण से कोई विरोध नहीं है क्योंकि यदि यह विषय सही नहीं होता तो निश्चित रूप से इसका वर्णन पवित्र क़ुरआन में होता। जैसाकि महान ईश्वर ने ईसाईयों और यहूदियों सहित पिछली कुछ जातियों के व्यवहार को नकारा और उसे सही नहीं बताया है। उदाहरण स्वरूप

महान ईश्वर पवित्र क़ुरआन के सूरये हदीद की २७वीं आयत में कहता" है" जिस सन्यास को ईसाईयों ने उत्पन्न किया था हमने उसे अनिवार्य नहीं किया था यदि अनिवार्य किया था तो केवल ईश्वर की प्रसन्नता के लिए परंतु उन्होंने उसका वैसा निर्वाह नहीं किया जैसा निर्वाह करना चाहिये था" यदि ईश्वर महान हस्तियों एवं अपने दूतों की क़ब्रों पर इमारत या मस्जिद बनाये जाने का विरोधी होता तो निश्चित रूप से वह इस विषय का इंकार पवित्र क़ुरआन में करता और इसे अप्रिय कार्य घोषित करता।

अच्छे व भले लोगों की क़ब्रों पर इमारत या मज़ार का निर्माण प्राचीन समय से मुसलमानों से मध्य प्रचलित रहा है और उसके चिन्हों को समस्त इस्लामी क्षेत्रों में देखा जा सकता है। शीया मुसलमानों ने पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजनों की क़ब्रों पर रौज़ों एवं ज़रीह अर्थात विशेष प्रकार की जाली का निर्माण किया। सुन्नी मुसलमानों ने भी शहीदों और अपनी सम्मानीय हस्तियों की क़ब्रों पर गुंम्बद का

निर्माण करवाया तथा उनके दर्शन के लिए जाते हैं। सीरिया के दमिश्क नगर में जनाबे ज़ैनब सलामुल्लाह का पवित्र रौज़ा, मिस्र में वह रौज़ा जहां हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम के पावन सिर को दफ्न किया गया है, इराक के बग़दाद नगर में अबु हनीफा और अब्दुल क़ादिर गीलानी का मज़ार, समरकन्द में सुन्नी मुसलमानों की प्रसिद्ध पुस्तक" सही बुखारी के लेखक मोहम्मद बिन इस्माईल का मज़ार और महान हस्तियों की समाधियों के ऊपर बहुत सारी मस्जिदें व इमारतें इसके कुछ नमूने हैं। महान हस्तियों और धार्मिक विद्वानों की समाधियों के पास पवित्र स्थलों एवं मस्जिदों

का निर्माण इस्लामी मूल्यों की सुरक्षा एवं उनके प्रति मुसलमानों के कटिबद्ध रहने का सूचक है। मुसलमान/ विशेषकर पैग़म्बरे इस्लाम, ईश्वरीय दूतों और महान हस्तियों की क़ब्रों के दर्शन को महान ईश्वर से सामिप्य प्राप्त करने का एक मार्ग समझते हैं और इस दिशा में वे प्रयास करते हैं। इस मध्य पथभ्रष्ठ और रूढ़िवादी विचार रखने वाला केवल वहाबी पंथ है जो दूसरे समस्त मुसलमानों से विरोध और इस्लामी क्षेत्रों में पवित्र स्थलों व स्थानों को ध्वस्त करने का प्रयास करता है। पैग़म्बरे इस्लाम के सुपुत्र हज़रत इब्राहीम की क़ब्र और उस मस्जिद को ध्वस्त कर देना, जिसे पैग़म्बरे इस्लाम के चाचा हज़रत हमज़ा की क़ब्र पर बनाया गया है, वे कार्य हैं जो महान हस्तियों की क़ब्रों पर बनाई गयी इमारतों के प्रति वहाबियों की

उपेक्षा और उनके अपमान व दुस्साहस के सूचक हैं। वहाबिया ने अपने इन कार्यों से करोड़ों मुसलमानों की आस्थाओं को आघात पहुंचाया है और अपने घृणित कार्यों के औचित्य में कमज़ोर रवायतों व कथनों का सहारा लेते और उनकी ओर संकते हैं। मोहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब के अनुयाईयों ने न केवल इन पवित्र स्थलों को ध्वस्त किया है बल्कि इससे भी आगे बढ़कर कहा है कि जो लोग महान हस्तियों की क़ब्रों की ज़ियारत करते हैं और उनकी क़ब्रों पर इमारत का निर्माण करते हैं वे काफिर व अनेकेश्वरवादी हैं। अलबत्ता इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय से, जिसके पास कोई तर्कसम्मत प्रमाण नहीं है, इस प्रकार के कार्य व विश्वास अपेक्षा से परे नहीं हैं। इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय के विश्वासों का बहुत सतही होना, रूढ़िवाद और पक्षपात इसकी स्पष्ट विशेषताओं में से हैं और इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय के विचारों में बुद्धि, सोच विचार और तर्क का कोई स्थान नहीं है।

मुसलमानों के लिए पैग़म्बरों, ईश्वरीय दूतों और महान हस्तियों की क़ब्रों की सुरक्षा न केवल सम्मानीय है बल्कि मुसलमानों के लिए उन घरों व स्थानों की सुरक्षा और उनका सम्मान विशेष महत्व रखता है जिसमें पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरी महान हस्तियां रही हैं। महान ईश्वर ने भी पवित्र क़ुरआन में सबका आह्वान किया है कि उन स्थानों की सुरक्षा की जाये जिसमें उसका गुणगान किया गया हो और मुसलमान इन स्थानों का सम्मान करें। तो मस्जिदों और पैग़म्बरों के घरों

की भांति पैग़म्बरे इस्लाम, हज़रत अली अलैहिस्सलाम, हज़रत फातेमा ज़हरा सलामुल्लाह अलैहा और उनके निकट संबंधियों के मकान भी प्रतिष्ठित हैं क्योंकि ये वे घर हैं जहां ईश्वर के भले बंदों की उपासना एवं दुआ की आध्यात्मिक एवं मधुर ध्वनि गूंजी थी और ये वे स्थान हैं जहां फरिश्ते आवा-जाही करते थे। दूसरी ओर इन मूल्यवान धरोहरों की रक्षा से धर्म इस्लाम की विशुद्धता में वृद्धि होती है। यदि इन इमारतों और यादगार चीज़ों की अच्छी तरह देखभाव व सुरक्षा की जाये तो मुसलमान खुले मन बड़े गर्व से विश्व वासियों से कह सकते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम ने मनुष्यों के मार्गदर्शन के लिए अनगिनत कठिनाइयां उठाई हैं। उन्होंने इसी साधारण और छोटे से घर में जीवन बिताया है, यही घर उनकी उपासना एवं दुआ का स्थल है परंतु बड़े खेद व दुःख के साथ कहना पड़ता है कि इन मूल्यवान अवशेषों व धरोहरों को वहाबियों ने ध्वस्त करके उनकी प्रतिष्ठा को बर्बाद कर दिया। यह ऐसी स्थिति में है कि इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय के अस्तित्व में आने से पहले मुसलमानों ने पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरे ईश्वरीय दूतों व महान हस्तियों की यादों की सुरक्षा के लिए बहुत प्रयास किया व कष्ट कष्ट किया था।

उदाहरण स्वरूप पैग़म्बरे इस्लाम की जीवनी से संबंधित पुस्तक के अतिरिक्त अंगूठी, जूता, दातून, तलवार और कवच जैसी पैग़म्बरे इस्लाम की व्यक्तिगत वस्तुओं यहां तक कि उस कुएं को भी सुरक्षित रखा गया था जिसमें से पैग़म्बरे

इस्लाम ने पानी पिया था परंतु खेद की बात है कि इनमें से कुछ ही चीज़ें बाक़ी हैं। वहाबियों द्वारा इस्लामी इतिहास की महत्वपूर्ण चीज़ों को नष्ट करना वास्तव में पुरातत्व अवशेषों को मिटाना है जबकि समस्त राष्ट्र और धर्म विभिन्न व प्राचीन मूल्यों को सुरक्षित रखे हुए हैं और उसे वे अपनी प्राचीन संस्कृति का भाग बताते हैं। वहाबी, सोचे बिना और केवल अपनी भ्रांतियों के आधार पर मूल्यवान इस्लामी मूल्यों व धरोहरों को नष्ट कर रहे हैं। यह ऐसी स्थिति में है जब अंतर्राष्ट्रीय क़ानूनों के आधार पर इस प्रकार की मूल्यवान इमारतों को युद्ध की स्थिति में भी नष्ट करना वैध व सही नहीं है। यहां रोचक बिन्दु यह है कि जहां भ्रष्ठ वहाबी संप्रदाय ने पैग़म्बरे इस्लाम, उनके निकट संबंधियों, साथियों तथा दूसरी मूल्यवान वस्तुओं को नष्ट कर दिया है वहीं यह धर्मभ्रष्ठ संप्रदाय इस्लाम और मुसलमानों के शत्रुओं के ख़ैबर नाम के दुर्ग को पवित्र नगर मदीना के पास यह कह कर रक्षा कर रहा है कि यह एक एतिहासिक धरोहर है।

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-14

प्रसिद्ध वहाबी लेखक हाफ़िज़ वहबा, वहाबियत के मूल विचारों व आस्थाओं के बारे में इस प्रकार लिखते हैं। बिदअत अर्थात धर्म में शामिल की जाने वाली नई बातों व पापों से संघर्ष विशेष कर उन बातों से संघर्ष जो अनेकेश्वरवाद की श्रेणी में आती हैं जैसे ईश्वर के प्रिय बंदों की ज़ियारत, तवस्सुल और उनसे संबंधित

वस्तुओं से विभूति चाहना, उनकी क़ब्रों के निकट नमाज़ पढ़ना, क़ब्रों पर दिया जलाना या उन पर कुछ लिखना, ईश्वर के अतिरिक्त किसी की भी सौगंध खाना, या उससे बीमारी ठीक करने की आशा रखना या उससे शेफ़ाअत करने का अनुरोध करना यह सब शिर्क या अनेकेश्वरवाद है और इनसे संघर्ष किया जाना चाहिए। इब्ने तैमिया का भी कहना है कि किसी भी क़ब्र को, चाहे पैग़म्बरों की ही क्यों न हो चूमना या हाथ लगाना अनेकेश्वरवाद है किसी भी रूप में वैध नहीं है बल्कि यह एकेश्वरवाद के विपरीत है। इस प्रकार की बातें स्वयं ही बिदअत के अतिरिक्त कुछ नहीं क्योंकि पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के काल में उनके साथी उनसे तथा उनकी वस्तुओं से विभूति प्राप्त करने का प्रयास करते थे और वे भी उन्हें इस कार्य से नहीं रोकते थे। इसका प्रमाण सुन्नी मुसलमानों के सबसे बड़े धर्मगुरुओं में से एक इमाम बुख़ारी का कथन है। वे कहते हैं कि उरवा इब्ने मसऊद पैग़म्बरे इस्लाम के साथियों को देखते थे और कहते थे कि ईश्वर की सौगंध पैग़म्बर द्वारा वुज़ू किए जाने के समय जो पानी गिरता था उसे उनके साथ अपने हाथ में ले लेते थे और अपने चेहरे तथा शरीर पर मल लेते थे। जब भी पैग़म्बर वुज़ू करते तो उनके वुज़ू का पानी लेने के लिए उनके साथियों के बीच इस प्रकार मुक़ाबला होता था कि ऐसा प्रतीत होता था कि शीघ्र ही उनके बीच टकराव हो जाएगा।

जब पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम हज के अवसर पर अपने बालों को मूंड़ते थे तो उनके साथी उनके सभी बालों को एकत्रित कर लेते थे और उनसे विभूति प्राप्त करते थे। इसी प्रकार जब कभी वे किसी छागल के मुंहाने से पानी पीते थे तो उनके साथ उस छागल के मुंहाने को काट कर रख लेते थे ताकि उससे विभूति प्राप्त कर सकें। उनके कवच, लाठी, तलवार, बर्तन, मुहर, अंगूठी, बाल व कफ़न से विभूति प्राप्त करने संबंधी हदीसें सहीह बुख़ारी के जेहाद एवं पैग़म्बरे इस्लाम की विशेषताओं के अध्याय में वर्णित हैं। यदि ये बातें अनेकेश्वरवाद होतीं तो पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम, मुसलमानों को अवश्य ही इस कार्य से रोकते और इ संबंध में कड़ाई से काम लेते। जैसा कि जब उनके पुत्र की मृत्यु को चंद्रगृहण से जोड़ने का प्रयास किया गया तो उन्होंने बड़ी कड़ाई से इस ग़लत आस्था का विरोध किया किंतु हम सुन्नी मुसलमानों की किताबों में देखते हैं कि लोगों द्वारा पैग़म्बरे इस्लाम और उनकी वस्तुओं से विभूति प्राप्त करने के प्रयास के बारे में अनेक हदीसे हैं जबकि पैग़म्बर द्वारा इसके विरोध के बारे में एक भी हदीस किसी भी विश्वस्त पुस्तक में नहीं मिलती।

वस्तुतः किसी व्यक्ति या उसकी वस्तु से विभूति प्राप्त करने के प्रयास का अर्थ यह होता है कि वह व्यक्ति ईश्वर के निकट ऊंचा दर्जा व सामिप्य रखता है किंतु

इस स्थायी आस्था के साथ कि वह ईश्वर की अनुमति के बिना कोई भलाई नहीं पहुंचा सकता या किसी बुराई को दूर नहीं कर सकता। पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के बैठने के स्थान या मिम्बर तथा उनकी क़ब्र से विभूति की कामना, उनकी क़ब्र को छूना या चूमना, पैग़म्बर के निधन के बाद मुसलमानों में प्रचलित रहा और मदीना नगर के सबसे बड़े धर्मगुरूओं में शामिल सईद बिन मुसय्यब और यहया बिन सईद भी ऐसा किया करते थे। ईश्वर के प्रिय बंदों की क़ब्रों व अन्य वस्तुओं से विभूति प्राप्त करने की कामना इस कारण है कि हम इन वस्तुओं को उन प्रिय बंदों से संबंधित समझते हैं और हमारा मानना है कि उनकी प्रतिष्ठा एवं महानता के चलते उनकी वस्तुओं में भी प्रतिष्ठा के भाव पाए जाते हैं। जब हम क़ुरआने मजीद में हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की घटना पढ़ते हैं तो देखते हैं कि हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम ने अपनी ज्योति रहित आंखों को हज़रत यूसुफ़ के कुर्ते से मला और उनकी आंखें लौट आईं। यदि ईश्वर के प्रिय बंदों की वस्तुओं से विभूति की कामना, अनेकेश्वरवाद होती तो क्या क़ुरआने मजीद हज़रत याक़ूब के इस कार्य को ग़लत नहीं ठहराता? पैग़म्बरों, इमामों और ईश्वर के प्रिय बंदों की वस्तुओं के विभूतिपूर्ण होने का एक ठोस प्रमाण है।

पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की क़ब्र को छूने और चूमने को अनेकेश्वरवाद बताना भी वहाबियत के भ्रष्ट विचारों एवं बिदअतों में से

एक है। सुन्नी मुसलमानों के सबसे बड़े धर्मगुरुओं में से एक अहमद बिन हम्बल ने कहा है कि इस कार्य में कोई आपत्ति नहीं है। अलबत्ता चूंकि पैग़म्बरे इस्लाम के साथी स्वयं उनके संपर्क में रहते थे इस लिए वे प्रयास करते थे कि सीधे उनसे और उनसे संबंधित वस्तुओं से विभूति प्राप्त करें किंतु हम मुसलमान जो उनके जीवन से सीधे लाभान्वित नहीं हो सकते, उनकी क़ब्र के निकट जा कर, उसे छू कर तथा चूम कर उनसे विभूति प्राप्त कर सकते हैं और उनसे अपने गहरे प्रेम का प्रदर्शन कर सकते हैं।

स्थानों की अपने आपमें कोई प्रतिष्ठा नहीं होती और ईश्वर के प्रिय बंदों द्वारा नमाज़ पढ़ने, रोज़ा रखने और ईश्वर की उपासना करने के कारण कुछ स्थानों में ख़ास विशेषताएं पैदा हो जाती हैं। अपने अच्छे बंदों के भले कर्मों के कारण ईश्वर कुछ स्थानों को अपनी दया व कृपा का पात्र बनाता है, वहां फ़रिश्ते आते हैं और वहां शांति मिलती है। यह वही विभूति है जो ईश्वर उन स्थानों को प्रदान करता है। ईमान वाला व्यक्ति इन स्थानों पर उपस्थित होकर ईश्वर पर अधिक ध्यान केंद्रत करता है और प्रार्थना व तौबा द्वारा अपने हृदय के द्वार ईश्वरीय प्रकाश की प्राप्ति के लिए खोल देता है। मस्जिदुन्नबी में और पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो

अलैहे व आलेही व सल्लम तथा ईश्वर के अन्य प्रिय बंदों की क़ब्रों के निकट उपस्थित हो कर हम उनके द्वारा सहन की गई कठिनाइयों और उनकी शुद्ध उपासनाओं को याद करते हैं और इस बात का प्रयास करते हैं कि स्वयं को उनके जैसा बनाएं और ईश्वर की शुद्ध रूप से उपसना के मार्ग पर चलें।

पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम अपनी मेराज की यात्रा में, जो मस्जिदुल अक़सा से आरंभ हुई, मदीना, तूरे सीना और बैत लहम में रुकें और वहां पर नमाज़ अदा की। ईश्वर के निकटवर्ती फ़रिश्ते हज़रत जिब्रईल ने उनसे कहा कि आपने मदीना नगन में नमाज़ पढ़ी क्योंकि वह आपके पलायन का स्थान है, तूरे सीना पर नमाज़ पढ़ी क्योंकि वहां ईश्वर ने हज़रत मूसा से बात की थी, बैत लहम में नमाज़ अदा की क्योंकि वहां हज़रत ईसा मसीह का जन्म हुआ था। इस आधा पर ईश्वर के पैग़म्बरों के जन्म अथव दफ़्न होने के स्थल पर नमाज़ पढ़ने में कोई अंतर नहीं है बल्कि लक्ष्य, उन प्रतिष्ठित लोगों से विभूति प्राप्त करना है जिनके पवित्र शरीर उस मिट्टी और उस स्थान से जुड़े रहे हैं चाहे उनकी आयु के आरंभ में या अंत में।

निश्चित रूप से ईश्वर के प्रिय बंदों यहां तक कि पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की क़ब्र पर सजदा करना सही नहीं है क्योंकि सजदा

मनुष्य की विनम्रता का चरम बिंदु है और यह भावना केवल ईश्वर के समक्ष ही स्वीकार्य है। तफ़सीरे क़ुरतुबी में वर्णित है कि पैग़म्बरे इस्लाम ने कहा। न तो क़ब्र की ओर नमाज़ पढ़ो और न ही उस पर बैठो। अर्थात क़ब्रों को क़िबला न बनाओ कि उनकी ओर मुख करके नमाज़ पढ़ो या उन पर सजदा करो। यहूदियों और ईसाइयों ने ऐसा ही किया और अंततः वे क़ब्र में दफ़्न व्यक्ति की उपासना करने लगे। किंतु पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम की क़ब्र के निकट नमाज़ पढ़ने का अर्थ उनसे विभूति चाहना है। ईश्वर पवित्र क़ुरआन में हाजियों को आदेश देता है कि वे मक़ामे इब्राहीम को अपनी नमाज़ का स्थान बनाएं। सूरए बक़रह की आयत क्रमांक 125 में कहा गया है। और मक़ामे इब्राहीम से अपने लिए उपासना स्थल का चयन करो। अन्य पैग़म्बरों की क़ब्रों के निकट नमाज़ पढ़ना, मक़ामे इब्राहीम के निकट नमाज़ अदा करने जैसा ही है। अंतर यह है कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का शरीर एक या कई बार इस स्थान से लगा है जबकि उन क़ब्रों में पैग़म्बरों के पवित्र शरीर सदा के लिए आराम कर रहे हैं।

क़ुरआने मजीद, सूरए आले इमरान की सत्रहवीं आयत में ईश्वर के कुछ प्रिय बंदों का उल्लेख इस प्रकार करता हैः वे संयम रखने वाले, सच बोलने वाले, (ईश्वर के समक्ष) विनम्र, दान देने वाले, आज्ञापालन करने वाले और भोर समय प्रायश्चित करने वाले हैं। अब यदि कोई आधी रात को उठ कर नमाज़ के लिए खड़ा हो तथा

गिड़गिड़ा कर ईश्वर से यह प्रार्थना करे कि प्रभुवर! मैं चाहता हूं कि तू भोर समय तुझ से क्षमा मांगने वालों के वास्ते मेरे पापों को क्षमा कर दे, तो क्या यह कार्य वैध है? अबू नईम ने अपनी किताब हिलयतुल औलिया में अनस इब्ने मालिक का कथन लिखा है कि जब हज़रत अली अलैहिस्सलाम की माता फ़ातेमा बिन्ते असद का निधन हुआ तो उनके लिए एक क़ब्र खोदी गई। पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम स्वयं क़ब्र खोदने के लिए नीचे उतरे और उन्होंने अपने हाथों से क़ब्र की मिट्टी बाहर फेंकी। जब क़ब्र पूर्ण रूप से तैयार हो गई तो वे उसमें लेटे गए और फिर उन्होंने कहाः ईश्वर ही है जीवन व मृत्य देता है और वह स्वयं ऐसा जीवित है जिसके लिए मृत्यु की कल्पना नहीं की जा सकती। प्रभुवर! मेरी माता फ़ातेमा बिन्ते असद को क्षमा कर, उन्हें उनके तर्क से अवगत करा और उनके स्थान को विस्तृत कर दे। तुझे तेरे पैग़म्बर और मुझसे पहले वाले पैग़म्बरों का वास्ता कि तू सबसे अधिक दयावान है।

कभी कहा जाता है कि चूंकि रचयिता पर रचना का कोई अधिकार नहीं होता अतः ईश्वर को रचना का वास्ता देना वैध नहीं है। इसका उत्तर यह है कि स्वयं कृपाशील ईश्वर ने अपने प्रिय बंदों के लिए स्वयं पर कुछ अधिकारों को स्वीकार किया है। कुरआने मजीद के सूरए रूम की सैंतालीसवीं आयत में हम पढ़ते हैं कि और ईमान वालों की सहायता करना हमारे ज़ि म्मे एक स्थायी अधिकार है। इसी

प्रकार सूरए यूनुस की आयत संख्या 103 में कहा गया हैः इसी प्रकार हमारा अधिकार है कि हम ईमान वालों को मुक्ति दें। क़ुरआने मजीद की इन आयतों के अतिरिक्त कुछ हदीसें भी हैं जो रचयिता पर रचना के अधिकार की ओर संकेत करती हैं। प्रख्यात सुन्नी धर्मगुरू जलालुद्दीन सुयूती की पुस्तक जामेउस्सग़ीर में वर्णित है। ईश्वर के लिए आवश्यक है कि उस व्यक्ति की सहायता करे जो अपनी पवित्रता की रक्षा और ईश्वरीय वर्जनाओं से बचने के लिए विवाह करे। इसी प्रकार सुनन इब्ने माजा में लिखा हुआ है कि तीन गुटों की सहायता ईश्वर के ज़िम्मे है। वह मुजाहिद जो ईश्वर की राह में युद्ध करता है, वह दास जो पैसे देकर स्वयं को स्वतंत्र कराने का प्रयास करे और वह व्यक्ति जो अपनी नैतिक पवित्रता की रक्षा के लिए विवाह करे।

इन हदीसों और दुआओं में ईश्वर पर बंदों के अधिकार का तात्पर्य वह स्थान और दर्जा है जो ईश्वर उनके द्वारा उसके आज्ञापालन के कारण उन्हें प्रदान करता है और यह बंदों के अधिकार नहीं बल्कि ईश्वर की दया व कृपा के कारण है। अत्यंत स्पष्ट सी बात है कि किसी भी बंदे का चाहे वह शताब्दियों तक ईश्वर की उपासना करे, ईश्वर पर कोई अधिकार नहीं हो सकता क्योंकि बंदों को जो अनुंपाएं मिली हैं वे सबकी सब ईश्वर की ही दी हुई हैं। इस आधार पर जिस अधिकार का हम ईश्वर को वास्ता देते हैं वह, वह अधिकार है जिसे ईश्वर ने अपनी दया व

कृपा से स्वयं के लिए स्वीकार किया है। दयावान ईश्वर सूरए बक़रह की आयत क्रमांक 245 में कहता हैः कौन है जो ईश्वर को अच्छा ऋण दे? जबकि सभी जानते हैं कि जो कुछ हमारे पास है वह ईश्वर का ही दिया हुआ है। इस प्रकार की बातें ईश्वर द्वारा अपने प्रिय बंदों पर दया व कृपा को दर्शाती हैं, यहां तक कि वह स्वयं को बंदों का ऋणी तक कहता है। वस्तुतः इस प्रकार ईश्वर लोगों को अपने आज्ञापालन के लिए प्रोत्साहित करना चाहता है। खेद के साथ कहना पड़ता है कि कट्टरपंथी और संकीर्ण सोच वाले वहाबी धर्म में विभिन्न प्रकार की बिदअतें पैदा करके अधिकांश मुसलमानों को काफ़िर एवं अनेकश्वरवादी और केवल स्वयं को सच्चा धर्मावलम्बी समझते हैं जबकि इस्लाम के सच्चे धर्मगुरुओं ने अपने बीच गहरे मतभेदों के बावजूद कभी भी एक दूसरे को काफ़िर या पथभ्रष्ट नहीं कहा।

वहाबियत और उसकी असलियत

مَن قَتَلَ نَفْسًا بِغَيْرِ نَفْسٍ أَوْ فَسَادٍ فِي الأَرْضِ فَكَأَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيعًا وَمَنْ أَحْيَاهَا فَكَأَنَّمَا أَحْيَا النَّاسَ جَمِيعًا

मायदा-32

कुरआन कहता है कि अगर कोई किसी को जुर्म किये बिना क़त्ल कर दे तो ऐसा ही है से इसने सभी को क़त्ल कर दिया हो और अगर कोई ज़िन्दा करदे तो ऐसा ही है जैसे उसने सभी को ज़िन्दा कर दिया।

ईरान में इस्लामी क्रान्ति के सफल होने के बाद इस्लाम के दुश्मन इसको ख़त्म करने के लिऐ जमा हो गये ताकि इस्लाम को मिटा दों इसके लिऐ उन्होंने ईरान को भी निशाना बनाया क्योंकि यह क्रान्ति ईरान में आई थी। इसके लिऐ पहला काम तो ये किया की ईरान के विरूध जंग छेड़ दी दूसरा काम ये किया कि ईरान को आतंकवाद का गढ़ बता कर क्षेत्र में ख़ौफ पैदा कर दिया। जिससे लोग इस क्रान्ति से दूर रहें परन्तु ऐसा हो न सका और दुश्मन को इसमें सफलता न मिल सकी।

दुश्मन को जब इसमें सफलता न मिल सकी तो उसने मुसलमानो को कमज़ोर करने के लिऐ मुसलमानो में फूट डाल कर एक दूसरे से अलग कर दिया, अब एक मुसलमान को दूसरे की ख़बर नही है वो किस हालत में है, एक देश को दूसरे की ख़बर नही है वो किन कठिनाईयों का सामना कर रहा है जबकि हज़रत मुहम्मद (स) की हदीस है आप फरमाते हैः

من سمع مسلما ینادی یا للمسلمین فلم یجبه فلیس بمسلم

अगर कोई मुसलमान किसी दूसरे मुसलमान भाई की आवाज़ सुने कि वो उसको सहायता के लिऐ बुला रहा है और वो उसकी सहायता न करे तो वो मुसलमान नही है।

इस हदीस में तो मुसलमान आया है कि अगर एक मुस लमान सहायता के लिए बुलाये और वो उसकी सहायता न करे तो वो मुसलमान नही है। दूसरी हदीस में तो ये है कि अगर बुलाने वाला मुसलमान न भी हो तब भी अगर एक मुसलमान उसकी सहायता न करे तब भी वो मुसलमान नही है। हज़रत मुहम्मद (स) फरमाते हैः

من سمع رجلاً ینادی یا للمسلمین فلم یجبه فلیس بمسلم

इस हदीस से ये बात समझ में आती है कि मुसलमान वही है जो दूसरो कि सहायता करता है, यहीं से ये बात भी समझ में आती है कि मुसलमान किसी को नुक़सान नही पहुँचाता, अब अगर कोई किसी को नुक़सान पहुँचाकर ये समझता रहे कि वो मुसलमान है तो ये ग़लत है, इस हदीस के आधार पर वो मुसलमान नहीं हो सकता।

यहीं से ये बात भी समझ में आती है कि कोई भी मुसलमान आतंकवादी नहीं होता, अगर कोई आतंक फैला रहा हो वो कुछ भी हो मुसलमान नही है, वो इस्लाम और मुसलमानो को बदनाम करना चाहता है। आतंकवाद का इस्लाम से कोई लेना देना नहीं है, आज जो लोग मुसलमानों को आतंकवादी कह रहे हैं उन्हें इस्लाम के बारे में पढ़ना चाहिये फिर फैसला करें कि कौन आतंकवादी है।

मुसलमानों ने कभी भी कोई युध आरम्भ नहीं किया, संसार में जितने भी युध हुऐ हैं चाहे किसी भी युध को लेंलें उससे इस्लाम और मुसलमानों का कोई सम्बन्ध नहीं है, फिर भी मुसलमानों को बदनाम किया जा रहा है, जबकि वो लोग जो एक दूसरे पर चढ़ाई करके हज़ारो और लाखों लोगों का सामूहिक नरसंहार कर

देते हैं उन्हें कोई कुछ नही कहता, विनाशकारी हथियार बनाने वालों को कोई कुछ नहीं कहता, मुसलमानों को एक जुट हो कर इसका सामना करना होगा।

अगर मुसलमान एक जुट हो जाऐ तो इस बदनामी से निपटा जा सकता है परन्तु आज मुसलमान फूट का शिकार होकर आपस में लड़ रहे हैं, एक दूसरे को काफिर कह रहे हैं, एक दूसरे को क़त्ल कर रहे हैं, मुसलमान, अपने मुसलमान भाई का सिर काट कर ख़ुश हो रहा है, जबकि इस्लाम ये नही सिखाता, हदीस तो ये कहती है कि अगर कोई मुसलमान किसी दूसरे मुसलमान भाई को सहायता के लिऐ बुला रहा है तो हर मुसलमान का कर्तव्य है कि उसकी सहायता करे अगर उसकी सहायता न करे तो वो मुसलमान कहलाने का हक़दार नही है।

आज फिलिस्तीन से ले कर सिरिया, यमन, ईराक़ अफग़ानिस्तान, पाकिस्तान.... ....में मुसलमान, मुसलमान से लड़ रहा है और यह नहीं समझ रहे कि ये दुश्मन की चाल है, दुश्मन यही तो चाहता है कि हम आपस ही में लड़ते रहे और वो अपना काम आराम से करते रहें।

इस्लाम के दुश्मनों ने जब देखा कि जब मुसलमान आपस में लड़ रहे हैं तो उन्होंने भी इससे लाभ उठाया और हथियारों की सप्लाई आरम्भ कर दी, जिससे

उन्हें आर्थिक लाभ भी हुआ और मुसलमान भी कमज़ोर होते रहे, अगर मुसलमानों की अब भी आँख नही खुली तो भविष्य में भी कमज़ोर होते रहेंगे।

इस्लाम के दुश्मनों ने इस्लाम को मिटाने के लिऐ अलग अलग तरीकों नये नये हमले किये उन्होंने इस्लामी कानून को बदलना आरम्भ कर दिया जिससे इस्लाम का चेहरा बदला जा सके जैसे कि जिहाद का अर्थ ही बदल डाला, इस कार्य में कुछ अनपढ़ मुसलमानों ने उन का साथ भी दिया जिससे उनका कार्य और भी आसान हो गया, तालिबान, अलक़ायदा और आज के समय में वहाबियत इसका उदाहरण हैं जिन्होंने उनका काम और भी आसान कर दिया। इन लोगों ने इस्लाम का मुखौटा लगा कर इस्लाम को नुक़सान पहुँचाया है, आज इस्लामी देशो में क्या कुछ नहीं हो रहा, आज फिलिस्तीन, मिस्र, सिरिया, यमन, ईराक़ अफग़ानिस्तान और पाकिस्तान इसी का शिकार हैं।

पहले तो यह था कि हम केवल सुनते थे कि इन्होंने वहाँ पर ऐसा कर दिया, वहाँ पर ऐसा कर दिया, इनके फत्वे भी बड़े अजीब ग़रीब होते हैं, परन्तु आज हम देख भी रहे हैं, बात फत्वों की नहीं है आज इन पर अमल भी किया जा रहा है, सिरिया में पाक सहाबा का मज़ार उड़ा दिया गया

ईराक़ में धार्मिक स्थलों को बम से उड़ाया गया, एक मुसलमान अल्लाहो अकबर कह कर दूसरे मुसलमान का सिर काट रहा है, उसका सीना चाक करके उसका कलेजा चबा रहा है जैसे कि हुज़ूर (स) के चचा हज़रत हमज़ा का कलेजा चबाया गया था।

क्या ऐसे लोग मुसलमान हो सकते हैं ? कभी नहीं, इनके कार्यों को देख कर हर व्यक्ति दाँतों में उगंली दबा लेगा, ये लोग इन्सान नहीं हैं।

अजीब बात यह है कि यह लोग अपना ख़ौफलाक चेहरा स्वयँ दूसरों को सामने पेश कर रहे हैं अपने अमानवीय कार्यों के वीडियो क्लिप स्वयँ ही इन्टरनेट पर डाल रहे हैं जो की अगर कोई दूसरा व्यक्ति यह कार्य करना चाहता तो अरबो डालर ख़र्च करके भी नहीं कर सकता था जो इन्होंने स्वयँ कर दिया।

शायद इनके ऐसे कार्यों को देख कर ही इमाम ख़ुमैनी ने कहा था कि हम अमेरिका और सद्दाम को तो माफ कर सकते हैं आले सऊद को नहीं, जबकि सद्दाम ने ईरान पर हमला किया था और अमेरिका ने उसको हथियार दिये थे और ईरान के एक जहाज़ को बम से उड़ा कर 250 से अधिक लोगों को मार दिया था, फिर भी इनको माफ किया जा सकता है तो आले सऊद को क्यों नही ? वो

इसलिऐ कि इन्होंने इस्लाम के क़ानूनों को अपने पैरों से रौंध डाला है, हज में हाजियों को क़त्ल कर डाला जहाँ पर एक चींटी को मारने की भी आज्ञा नहीं है।

ऐसे कार्यों को जब कोई दूसरा देखेगा तो इस्लाम से नफरत करने लगेगा यह लोग कार्य ही ऐसे कर रहे हैं الله اكبر और لا الہ الا الله कह कर मुसलमान का सिर काट रहे हैं, यह क्लिप जब कोई दूसरा देखेगा तो इस्लाम से नफरत करेगा, मुसलमानों को आतंकवादी हा कहेगा।

जब इस्राईल ने देखा कि उसका नील से फरात तक का सपना चकनाचूर हो गया तो उसने मुसलमानों को आपस में लड़ा दिया, वहाबियों के द्वारा सिरिया और मिस्र में नाअमनी फैला दी, इसी से पता चलता है कि वहाबियों का लिंक किससे है, किसने इनको पाला है।

बड़े अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है कि वो लोग जो अपने आप को इस्लाम का धर्म प्रचारक कहते हैं और न जाने कितना पैसा इस्लाम के प्रचार पर ख़र्च करते हैं वही लोग इस्लाम को सबसे अधिक नुक़सान पहुँचा रहे हैं, यही लोग ऐकेश्वरवाद की जगह बहुईश्वर वाद लोगो तक पहुँचा रहे हैं, सहाबा का अपमान भी यही लोग कर रहे हैं, सिरिया और मिस्र में यह लोग क्या कुछ नही कर रहे

जबकि वहाँ पर कुछ नही करना चाहिये था, फिलिस्तीन के लिऐ कुछ नहीं किया जबकि वहाँ पर कुछ न कुछ अवश्य करना चाहिये था।

इनके सामने एक एक मुसलमान को खड़ा होना चाहिऐ बात शियों तक सिमित नही यह लोग सहाबा का अपमान कर रहे हैं अगर इनको ना रोका गया तो कल जो भी इनकी बात नहीं मानेगा उसको क़त्ल कर देंगे, यह लोग पैसों के लिऐ काम करते हैं।

रिवायतों में है कि जब सुफयानी आयेगा तो वो शियों को क़त्ल करने के लिऐ इनाम रखेगा कि जो कोई भी एक शिया का सिर काट कर लायेगा उसको इनाम दिया जायेगा, इसमें पहले तो शिया ही मारे जायेंगे परन्तु बाद में दूसरे लोग भी नही बच पायेंगे पैसों के लिऐ उनका सिर काटा जायेगा और कहा यह जायेगा कि यह भी शिया थे जो तक़इय्या कर रहे थे, इनका बस चले तो यह लोग हुज़ुर (स) का मज़ार भी तोड़ डालें क्योंकि यह लोग हुज़ुर (स) के मज़ार की ज़ियारत करने को शिर्क समझते हैं, उसको चूमने को शिर्क समझते हैं, वहाँ मन्नत माँगने को शिर्क समझते हैं।

मिस्र में इन्होंने हसन शहाता को शहीद कर दिया जबकि हसन शहाता एक सच्चे मुसलमान ही नही बल्कि आप मिस्र के अल-अज़हर विश्वविद्दालय के बड़े विद्धानो में से थे, उन पर 2000 से अधिक लोगों ने हमला करके शहीद कर दिया, आपके शव का भी अपमान किया गया उसको रस्सी में बाँध कर गलियों में खींचा गया, इसको देख कर करबला याद आ जाती है, करबला में भी यही कुछ हुआ था वहाँ पर भी लाशों का अपमान किया गया था वहाँ पर एक नही बल्कि 72 शव थे जिनका अपमान किया गया था।

सिरिया में " हलब " शहर के उत्तरी उपनगर में शिया आबादी वाले दो गांव "नबल" और " अल-ज़हरा " पर इन्होंने हमला करके घेर लिया है, नबल और अल-ज़हरा लगभग 10 महीनों से आतंकवादियों के घेरे में हैं और इस घेरे के चालू रहने से वहाँ के नागरिकों के लिऐ इस क्षेत्र में जीवन व्यतीत करना कठिन हो गया है क्योंकि इन दोनों गावों में दवा और खाद्द सामग्री का नामोनिशान तक नही है, वहाँ के लोग खाने और पानी के लिऐ तरस रहे हैं, यह मानव त्रासदी नही तो और क्या है।

यह लोग एक बच्चे के हाथ में तलवार देकर कहते हैं कि इसका सिर काट दे, यह बच्चा आगे चल कर एक क्रूर व्यक्ति के सिवा ।।क्या बन सकता है

एक 3 या 4 वर्ष के बच्चे के सामने उसके माता पिता को मार देते हैं उस बच्चे का क्या होगा

यह लोग ना बच्चों पर रहम खाते हैं ना बड़ों पर, ना औरतों पर रहम खाते हैं ना किसी और पर, इन्होंने एक 3 वर्ष के बच्चे को फाँसी पर चढ़ा दिया ,एक बच्चे को दज्जाल कह कर मार डाला, यह लोग सिरिया में हुज़ुर (स) की नवासी हज़रत ज़ैनब (स) के मज़ार को उड़ाने की धमकी दे चुके हैं।

इन सब चीज़ों को देखते हुए हर व्यक्ति इनसे नफरत करने लगा है, इन्होंने जिहादे निकाह के नाम पर स्त्रीयों का शोषण किया और अभी तक हो भी रहा है, इन्होंने जिहादे निकाह के नाम पर विश्व के सारे आवारा स्त्री पुरूष सिरिया में जमा कर दिये है।

यही कारण है कि ट्यूनीशिया की कुछ स्त्रीयों ने जब इनके इन करतूतों को देखा कि यह लोग किस प्रकार स्त्रीयों का शोषण कर रहे हैं तो उन्होंने स्त्रीयों की एक फोर्स बनाई जो नंगी रहती हैं जो हर प्रकार से इस्लाम धर्म का अपमान करती है??????

उनके इस कार्य का उत्तरदायी कौन होगा

सिरिया में फौज के हाथों पकड़ा गया एक आतंकी कहता है कि हमें एक शिया का सिर काटने के लिऐ 700 डालर दिये जाते थे।

इन सब बातों को देखते हुऐ हर मुसलमान का कर्तव्य है कि वो इनके विरूध आवाज़ उठायेः

आतंकवादियो के विरूध

उलटे सीधे फतवे देने वाले मुफतियों के विरूध

जो इन आतंकवादियो की सहायता कर रहे हैं उनके विरूध

अन्त में हम इमामे ज़माना के ज़ूहुर के लिऐ अल्लाह से दुआ और प्रार्थना करते हैं कि आपका ज़ूहुर शीघ्र हो जाऐ जिससे सभी लोग चैन की साँस ले सकें।

वहाबियत और मक़बरों का निर्माण

पैग़म्बरों, ईश्वरीय दूतों और महान हस्तियों की क़ब्रों पर मज़ार एवं मस्जिद का निर्माण वह कार्य है जिसके बारे में वहाबी कहते हैं कि यह चीज़ धर्म में नहीं है

और इसके संबंध में वे अकारण ही संवेदनशीलता दिखाते हैं। यह बात सबसे पहले वहाबियत की बुनियाद रखने वाले इब्ने तैय्मिया और उसके पश्चात उसके शिष्य इब्ने क़य्यम जौज़ी ने कही। उन्होंने क़ब्रों के ऊपर इमारत निर्माण करने को हराम और उसके ध्वस्त करने को अनिवार्य होने का फतवा दिया। इब्ने क़ैय्यम अपनी किताब "“ज़ादुल माअद फी हुदा ख़ैरिल एबाद"” में लिखता है क़ब्रों के ऊपर जिस इमारत का निर्माण किया गया है उसका ध्वस्त करना अनिवार्य है और इस कार्य में एक दिन भी विलंब नहीं किया जाना चाहिये। इस आधार पर मोहम्मद इब्ने अब्दुल वह्हाब द्वारा भ्रष्ठ वहाबी पंथ की बुनियाद रखे जाने और सऊद परिवार द्वारा उसके समर्थन के बाद पवित्र स्थलों व स्थानों पर भारी पैमाने पर आक्रमण किये गये और वहाबियों ने महत्वपूर्ण इस्लामी स्थलों को ध्वस्त करना आरंभ कर दिया। वर्ष १३४४ हिजरी क़मरी अर्थात १९२६ में वहाबियों द्वारा पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजनों और साथियों की क़ब्रों के ऊपर बने मज़ारों को ध्वस्त किये जाने को सबसे अधिक दुस्साहसी कार्य समझा जाता है जबकि वहाबी और उनके विद्वान आज तक अपने इस अमानवीय कृत्य का कोई तार्किक व धार्मिक कारण पेश नहीं कर सके हैं।

इस्लाम धर्म की निशानियों की सुरक्षा और उनका सम्मान महान ईश्वर की सिफारिश है। पवित्र क़ुरआन के सूरये हज की ३२वीं आयत में महान ईश्वर ने

ईश्वरीय चिन्हों की सुरक्षा के लिए मुसलमानों का आह्वान किया है। इस संबंध में महान ईश्वर कहता है" जो भी ईश्वर की निशानियों व चिन्हों को महत्व दे तो यह कार्य दिलों में ईश्वरीय भय होने का सूचक है" जिस तरह से सफा, मरवा, मशअर, मिना और हज के समस्त संस्कारों को ईश्वरीय निशानियां बताया गया है उसी तरह पैग़म्बरों और महान हस्तियों की क़ब्रों का सम्मान भी ईश्वरीय धर्म इस्लाम के आदेशों का पालन है और यह कार्य महान ईश्वर से सामिप्य प्राप्त करने के परिप्रेक्ष्य में है। क्योंकि पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरे पैग़म्बर व ईश्वरीय दूत ज़मीन पर महान व सर्वसमर्थ ईश्ववर की सबसे बड़ी निशानी थे और इन महान हस्तियों के प्रति आदरभाव एवं उनकी प्रतिष्ठा का एक तरीक़ा उनकी क़ब्रों की सुरक्षा है। दूसरी ओर पैग़म्बरों और महान हस्तियों की क़ब्रों की सुरक्षा एवं उसका सम्मान, इस्लाम धर्म के प्रति मुसलमानों के प्रेम, लगाव और इसी तरह इन महान हस्तियों द्वारा उठाये गये कष्टों के प्रति आभार व्यक्त करने का सूचक है। पवित्र क़ुरआन ने भी इस कार्य को अच्छा बताया है और समस्त मुसलमानों को आदेश दिया है कि वे न केवल पैग़म्बरे इस्लाम बल्कि उनके पवित्र परिजनों से भी प्रेम करें। पवित्र क़ुरआन के सूरये शूरा में महान ईश्वर कहता है"" हे पैग़म्बर कह दो कि मैंने जो ईश्वरीय आदेश तुम लोगों तक पहुंचाया है उसके बदले में मैं अपने निकट संबंधियों से प्रेम करने के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता" "

अब यहां पर पूछा जाना चाहिये कि क्या पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजनों की रचनाओं, उनके जीवन स्थलों और उनकी क़ब्रों की सुरक्षा उनके प्रति सम्मान नहीं है?

यहां यह जानना रोचक होगा कि पवित्र क़ुरआन में भी न केवल इन निशानियों की सुरक्षा की सिफारिश की गयी है बल्कि पवित्र क़ुरआन ने क़ब्रों के ऊपर इमारतों के निर्माण को वैध भी बताया है। इस बात को "असहाबे कहफ़" की एतिहासिक घटना में भी देखा जा सकता है। जब असहाबे कहफ तीन सौ वर्षों के बाद नींद से जागे और उसके कुछ समय के पश्चात वे मर गये तो दूसरे लोग आपस में बात कर रहे थे कि उनकी क़ब्र के ऊपर इमारत का निर्माण किया जाये या नहीं। उनमें से कुछ लोगों ने कहा कि इन लोगों के सम्मान के लिए उनकी कब्रों के ऊपर इमारत का निर्माण करना आवश्यक है जबकि कुछ दूसरे कह रहे थे कि उनकी क़ब्रों पर मस्जिद का निर्माण किया जाना चाहिये ताकि उनकी याद बाक़ी रहे। इस विषय का वर्णन पवित्र क़ुरआन के सूरये कहफ की २१वीं आयत में भी आया है जो इस बात का सूचक है कि ब्रह्मांड के रचयिता को भले लोगों की क़ब्रों के ऊपर इमारत के निर्माण से कोई विरोध नहीं है क्योंकि यदि यह विषय सही नहीं होता तो निश्चित रूप से इसका वर्णन पवित्र क़ुरआन में होता। जैसाकि महान ईश्वर ने

ईसाईयों और यहूदियों सहित पिछली कुछ जातियों के व्यवहार को नकारा और उसे सही नहीं बताया है।

उदाहरण स्वरूप महान ईश्वर पवित्र कुरआन के सूरये हदीद की २७वीं आयत में कहता" है" जिस सन्यास को ईसाईयों ने उत्पन्न किया था हमने उसे अनिवार्य नहीं किया था यदि अनिवार्य किया था तो केवल ईश्वर की प्रसन्नता के लिए परंतु उन्होंने उसका वैसा निर्वाह नहीं किया जैसा निर्वाह करना चाहिये था" यदि ईश्वर महान हस्तियों एवं अपने दूतों की क़ब्रों पर इमारत या मस्जिद बनाये जाने का विरोधी होता तो निश्चित रूप से वह इस विषय का इंकार पवित्र कुरआन में करता और इसे अप्रिय कार्य घोषित करता।

अच्छे व भले लोगों की क़ब्रों पर इमारत या मज़ार का निर्माण प्राचीन समय से मुसलमानों से मध्य प्रचलित रहा है और उसके चिन्हों को समस्त इस्लामी क्षेत्रों में देखा जा सकता है। शीया मुसलमानों ने पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजनों की क़ब्रों पर रौज़ों एवं ज़रीह अर्थात विशेष प्रकार की जाली का निर्माण किया। सुन्नी मुसलमानों ने भी शहीदों और अपनी सम्मानीय हस्तियों की क़ब्रों पर गुंम्बद का निर्माण करवाया तथा उनके दर्शन के लिए जाते हैं। सीरिया के दमिश्क नगर में जनाबे ज़ैनब सलामुल्लाह का पवित्र रौज़ा, मिस्र में वह रौज़ा जहां हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम के पावन सिर को दफ्न किया गया है, इराक के बग़दाद नगर

में अबु हनीफा और अब्दुल क़ादिर गीलानी का मज़ार, समरकन्द में सुन्नी मुसलमानों की प्रसिद्ध पुस्तक" सही बुखारी के लेखक मोहम्मद बिन इस्माईल का मज़ार और महान हस्तियों की समाधियों के ऊपर बहुत सारी मस्जिदें व इमारतें इसके कुछ नमूने हैं। महान हस्तियों और धार्मिक विद्वानों की समाधियों के पास पवित्र स्थलों एवं मस्जिदोंका निर्माण इस्लामी मूल्यों की सुरक्षा एवं उनके प्रति मुसलमानों के कटिबद्ध रहने का सूचक है। मुसलमान/ विशेषकर पैग़म्बरे इस्लाम, ईश्वरीय दूतों और महान हस्तियों की क़ब्रों के दर्शन को महान ईश्वर से सामिप्य प्राप्त करने का एक मार्ग समझते हैं और इस दिशा में वे प्रयास करते हैं। इस मध्य पथभ्रष्ठ और रूढ़िवादी विचार रखने वाला केवल वहाबी पंथ है जो दूसरे समस्त मुसलमानों से विरोध और इस्लामी क्षेत्रों में पवित्र स्थलों व स्थानों को ध्वस्त करने का प्रयास करता है। पैग़म्बरे इस्लाम के सुपुत्र हज़रत इब्राहीम की क़ब्र और उस मस्जिद को ध्वस्त कर देना, जिसे पैग़म्बरे इस्लाम के चाचा हज़रत हमज़ा की क़ब्र पर बनाया गया है, वे कार्य हैं जो महान हस्तियों की क़ब्रों पर बनाई गयी इमारतों के प्रति वहाबियों की उपेक्षा और उनके अपमान व दुस्साहस के सूचक हैं। वहाबिया ने अपने इन कार्यों से करोड़ों मुसलमानों की आस्थाओं को आघात पहुंचाया है और अपने घृणित कार्यों के औचित्य में कमज़ोर रवायतों व कथनों का सहारा लेते और उनकी ओर संकते हैं। मोहम्मद बिन अब्दुल वहहाब के अनुयाईयों ने न केवल इन पवित्र स्थलों को ध्वस्त किया है बल्कि इससे भी

आगे बढ़कर कहा है कि जो लोग महान हस्तियों की क़ब्रों की ज़ियारत करते हैं और उनकी क़ब्रों पर इमारत का निर्माण करते हैं वे काफिर व अनेकेश्वरवादी हैं। अलबत्ता इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय से, जिसके पास कोई तर्कसम्मत प्रमाण नहीं है, इस प्रकार के कार्य व विश्वास अपेक्षा से परे नहीं हैं। इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय के विश्वासों का बहुत सतही होना, रूढ़िवाद और पक्षपात इसकी स्पष्ट विशेषताओं में से हैं और इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय के विचारों में बुद्धि, सोच विचार और तर्क का कोई स्थान नहीं है।

मुसलमानों के लिए पैग़म्बरों, ईश्वरीय दूतों और महान हस्तियों की क़ब्रों की सुरक्षा न केवल सम्मानीय है बल्कि मुसलमानों के लिए उन घरों व स्थानों की सुरक्षा और उनका सम्मान विशेष महत्व रखता है जिसमें पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरी महान हस्तियां रही हैं। महान ईश्वर ने भी पवित्र क़ुरआन में सबका आह्वान किया है कि उन स्थानों की सुरक्षा की जाये जिसमें उसका गुणगान किया गया हो और मुसलमान इन स्थानों का सम्मान करें। तो मस्जिदों और पैग़म्बरों के घरों की भांति पैग़म्बरे इस्लाम, हज़रत अली अलैहिस्सलाम, हज़रत फातेमा ज़हरा सलामुल्लाह अलैहा और उनके निकट संबंधियों के मकान भी प्रतिष्ठित हैं क्योंकि ये वे घर हैं जहां ईश्वर के भले बंदों की उपासना एवं दुआ की आध्यात्मिक एवं मधुर ध्वनि गूंजी थी और ये वे स्थान हैं जहां फरिश्ते आवा-जाही करते थे। दूसरी

ओर इन मूल्यवान धरोहरों की रक्षा से धर्म इस्लाम की विशुद्धता में वृद्धि होती है। यदि इन इमारतों और यादगार चीज़ों की अच्छी तरह देखभाव व सुरक्षा की जाये तो मुसलमान खुले मन बड़े गर्व से विश्व वासियों से कह सकते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम ने मनुष्यों के मार्गदर्शन के लिए अनगिनत कठिनाइयां उठाई हैं। उन्होंने इसी साधारण और छोटे से घर में जीवन बिताया है, यही घर उनकी उपासना एवं दुआ का स्थल है परंतु बड़े खेद व दुःख के साथ कहना पड़ता है कि इन मूल्यवान अवशेषों व धरोहरों को वहाबियों ने ध्वस्त करके उनकी प्रतिष्ठा को बर्बाद कर दिया। यह ऐसी स्थिति में है कि इस पथभ्रष्ठ सम्प्रदाय के अस्तित्व में आने से पहले मुसलमानों ने पैग़म्बरे इस्लाम और दूसरे ईश्वरीय दूतों व महान हस्तियों की यादों की सुरक्षा के लिए बहुत प्रयास किया व कष्ट कष्ट किया था।

उदाहरण स्वरूप पैग़म्बरे इस्लाम की जीवनी से संबंधित पुस्तक के अतिरिक्त अंगूठी, जूता, दातून, तलवार और कवच जैसी पैग़म्बरे इस्लाम की व्यक्तिगत वस्तुओं यहां तक कि उस कुएं को भी सुरक्षित रखा गया था जिसमें से पैग़म्बरे इस्लाम ने पानी पिया था परंतु खेद की बात है कि इनमें से कुछ ही चीज़ें बाक़ी हैं। वहाबियों द्वारा इस्लामी इतिहास की महत्वपूर्ण चीज़ों को नष्ट करना वास्तव में पुरातत्व अवशेषों को मिटाना है जबकि समस्त राष्ट्र और धर्म विभिन्न व प्राचीन मूल्यों को सुरक्षित रखे हुए हैं और उसे वे अपनी प्राचीन संस्कृति का भाग

बताते हैं। वहाबी, सोचे बिना और केवल अपनी भ्रांतियों के आधार पर मूल्यवान इस्लामी मूल्यों व धरोहरों को नष्ट कर रहे हैं। यह ऐसी स्थिति में है जब अंतर्राष्ट्रीय क़ानूनों के आधार पर इस प्रकार की मूल्यवान इमारतों को युद्ध की स्थिति में भी नष्ट करना वैध व सही नहीं है। यहां रोचक बिन्दु यह है कि जहां भ्रष्ठ वहाबी संप्रदाय ने पैग़म्बरे इस्लाम, उनके निकट संबंधियों, साथियों तथा दूसरी मूल्यवान वस्तुओं को नष्ट कर दिया है वहीं यह धर्मभ्रष्ठ संप्रदाय इस्लाम और मुसलमानों के शत्रुओं के ख़ैबर नाम के दुर्ग को पवित्र नगर मदीना के पास यह कह कर रक्षा कर रहा है कि यह एक एतिहासिक धरोहर है।

वहाबियत और शिफ़ाअत

इस्लाम धर्म में शिफ़ाअत ईश्वर की ओर से मनुष्यों पर एक विभूती बतायी गयी है। जिन लोगों ने उपासना के बंधन को नहीं तोड़ा है और अनेकेश्वरवाद का शिकार नहीं हुए हैं, ईश्वर के निकटवर्ती बंदों की शिफ़ाअत उनके लिए आशा की किरण है जो निराशा को उनके दिलों से दूर करती है और ईश्वरीय दया की ओर उनके दिलों को प्रेरित व उत्साहित करती है किन्तु शिफ़ाअत के विषय में विदित रूप से इस्लाम की ओढ़नी ओढ़े कुछ संप्रदायों की भ्रांतियां वह विषय है जिसकी समीक्षा करना अतिआवश्यक है।

पिछले कार्यक्रम में शिफ़ाअत के विषय को नकारने के संबंध में वहाबियों की ओर से प्रस्तुत किए गये कुछ तर्कों को पेश किया और सुन्नी समुदाय की मान्यता प्राप्त पुस्तकों से प्रमाण और कुरआनी तर्कों को पेश करके इन भ्रांतियों का ठोस उत्तर दिया। इस कार्यक्रम में भी हम आपको यह बताएंगे कि किन तर्कों के कारण वहाबी शिफ़ाअत के विषय का विरोध करते हैं और उसका तर्कसंगत उत्तर आपके सामने पेश करेंगे। कृपया हमारे साथ रहिए।

वहाबियों का यह मानना है कि पवित्र कुरआन के स्पष्ट आदेशानुसार दुआ के समय ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से दुआ नहीं करनी चाहिए और ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से शिफ़ाअत की मांग करना वास्तव में ईश्वर के अलावा किसी और से अपनी मांगें मांगना है। वहाबी अपनी इस बात के लिए सूरए जिन्न की आयत संख्या 18 की ओर संकेत करते हैं जिसमें आया है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से न मांगो। इसी प्रकार सूरए ग़ाफ़िर की आयत संख्या 60 में आया है कि मुझसे दुआ करो मैं स्वीकार करूंगा।

सूरए जिन्न की अट्ठारहवीं आयत में पवित्र कुरआन मुसलमानों से मांग करता है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और से न मांगो, इस प्रकार से उसने ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य की उपासना के विषय को प्रस्तुत किया है क्योंकि ईश्वर के

अतिरिक्त किसी और की उपासना और उसके लिए सजदा और रूकअ करना, अनकेश्वरवाद है और इस कार्य को अंजाम देने वाला अनेकेश्वरवादी होगा किन्तु यहां पर यह बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ईश्वर के निकटवर्ती बंदों से शिफ़ाअत की इच्छा, उनकी उपासना के अर्थ में नहीं है बल्कि जो भी शिफ़ाअत की इच्छा रखता है उसे यह पूर्ण रूप से ज्ञात होता है कि केवल ईश्वर की अनुमति से ही शिफ़ाअत संभव है। इस प्रकार के लोग ईश्वर के निकटवर्ती लोगों और सच्चे, निष्ठावान और मोमिन बंदों को मध्यस्थ बनाते हैं ताकि वे ईश्वर के निकट उसके लिए दुआ करें क्योंकि ईश्वर अपने पैग़म्बरों और निकटवर्ती बंदों की दुआओं को कभी भी रद्द नहीं करता।

यदि कोई व्यक्ति ईश्वरीय दूतों से यह चाहे कि वे उसके लिए दुआ करें ताकि ईश्वर उसके पापों को क्षमा कर दे या उसके मन की इच्छा को पूरा कर दे तो उसने कभी भी ईश्वरीय दूतों को ईश्वर के समान नहीं समझा बल्कि केवल उसने उन्हें मध्यस्थ बनाया है। इस्लाम धर्म के प्रसिद्ध विद्वान और पवित्र क़ुरआन के व्याख्याकार अल्लामा तबातबाई इस आस्था के संबंध में कहते हैं कि इमाम से अपनी मांगों का मांगना उसी समय अनेकेश्वरवाद समझा जाएगा जब दुआ मांगने वाला इमाम को ईश्वर की भांति प्रभावी और अपार शक्ति का स्वामी समझे किन्तु उसे यह ज्ञात है कि समस्त चीज़ें ईश्वर के हाथ में है और केवल वही प्रभावी है,

इमाम को केवल मध्यस्था या माध्यम समझता है, तो इसमें अनेकेश्वरवाद की कोई बात ही नहीं है।

अब्दुल वह्हाब की ओर से इस्लाम के नाम पर फैलायी गयीं भ्रष्ट आस्थाएं, इस्लाम धर्म की मान्यता प्राप्त हदीसों, कथनों और शिक्षाओं से बहुत ही सरलता से अपमानित और खंडित हो जाती हैं। वास्तविकता यह है कि मुहम्मद इब्ने अब्दुल वह्हाब और इसी प्रकार इब्ने तैमिया उपासना की गहराई को समझ ही नहीं सके हैं। उन्होंने यह समझा या यह दिखाने का प्रयास किया कि ईश्वर के सच्चे और शिष्टाचारी बंदों से शिफ़ाअत की मांग करना, उनकी उपासना के अर्थ में है। उन्हें ज्ञात ही नहीं है कि मूल उपासना, ईश्वर के समक्ष पूर्ण रूप से विनम्र और नतमस्तक होना है और शालीन व योग्य लोगों के सम्मान और उनसे विनम्रभाव से दुआ करने की गणना उपासना में नहीं होती। विशेषकर यदि यह लोग ईश्वरीय दूत और पैग़म्बरे इस्लाम के पवित्र परिजन हों, जो स्वयं ईश्वर की उपासना और आज्ञापालन के आदर्श हैं।

वहाबियों ने शिफ़ाअत की रद्द में जो तर्क प्रस्तुत किए हैं उनमें से एक यह है कि उनका मानना है कि शिफ़ाअत का अधिकार केवल ईश्वर को है और उसके अतिरिक्त किसी को भी इस प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं है। उन्होंने अपने दावे

की पुष्टि के लिए पवित्र क़ुरआन के सूरए ज़ुमर की आयत संख्या 43 और 44 को पेश किया जिसमें आया है कि क्या उन लोगों ने ईश्वर को छोड़कर सिफ़ारिश करने वाले चुन लिए हैं तो आप उनसे कह दीजिए कि ऐसा क्यों है, चाहे इन लोगों के बस में कुछ न भी हो और किसी प्रकार की बुद्धि न रखते हों? आप कह दीजिए कि शिफ़ाअत का पूरा अधिकार अल्लाह के हाथों में है, उसी के पास धरती और आकाश का सारा प्रभुत्व है और इस के बाद तुम भी उसी की ओर पलटाए जाओगे।

इस आयत का यह तात्पर्य नहीं है कि आप कहें कि केवल और केवल ईश्वर ही शिफ़ाअत करता है और किसी को शिफ़ाअत करने का अधिकार नहीं है क्योंकि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि सैद्धांतिक रूप से ईश्वर कभी भी किसी की किसी के निकट सिफ़ारिश नहीं करता, ईश्वर इन सब चीज़ों से महान और बड़ा है। बुद्धि भी इस विषय को स्वीकार नहीं करती कि हम यह कहें कि ईश्वर अमुक व्यक्ति का मध्यस्थ बना कि उसके पाप क्षमा कर दिए गये क्योंकि इसके तुरंत बाद मन में यह प्रश्न उठता है कि ईश्वर किसके निकट मध्यस्थ बना? इस आयत में चर्चा का बिन्दु यह है कि ईश्वर स्वामी और सिफ़ारिश स्वीकार करने वाला है और वह जिसमें भी योग्यता और शालीनता देखता है उसे इस बात की अनुमति देता है कि अमुक व्यक्ति की सिफ़ारिश करे। इस स्थिति में इस आयत का वहाबियों के दावों से दूर दूर का भी संबंध नहीं है क्योंकि इस आयत में उन लोगों और उन वस्तुओं

के बारे में बात हो रही है जिनमें बुद्धि या सोचने की शक्ति नहीं है जबकि ईश्वरीय दूत और ईश्वर के निकटवर्ती बंदे इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ हैं।

पैग़म्बरे इस्लाम (स) के काल से अब तक मसलमान केवल ईश्वर को ही शिफ़ाअत का स्वामी और उसे स्वीकार करने वाला समझते थे न उनके उतराधिकारियों और उनके निकटवर्ती साथियों को। मुसलमानों का यह मानना था कि शिफ़ाअत वही कर सकता है जिसे ईश्वर ने अनुमति दी हो और पवित्र क़ुरआन की आयतों और हदीसों में भी यह मिलता है कि ईश्वर ने पैग़म्बर को शिफ़ाअत करने की अनुमति दी है। इस प्रकार से पैग़म्बरे इस्लाम (स) से शिफ़ाअत की अनुमति पाने वाले के रूप में शिफ़ाअत की गुहार लगाते हैं।

तिरमीज़ी और बुख़ारी जैसे सुन्नी समुदाय के दिग्गज धर्मगुरूओं ने अपनी हदीसों की किताबों में कभी भी शिफ़ाअत को अनेकेश्वरवाद नहीं कहा। सोनने तिरमीज़ी सुन्नी मुसलमानों के निकट हदीस की एक मान्यता प्राप्त और सुन्नी समुदाय के स्रोत सहाये सित्ता में शामिल एक पुस्तक है जिसको मुहम्मद तिरमीज़ी ने लिखा था। मुहम्मद तिरमीज़ी इस पुस्तक में शिफ़ाअत के बारे में अनस बिन मालिक के हवाले से लिखते हैं कि मैंने पैग़म्बरे इस्लाम (स) से कहा कि प्रलय के दिन मेरी शिफ़ाअत करें, उन्होंने स्वीकार कर लिया और कहा कि मैं यह काम

करूंगा। मैंने पैग़म्बरे इस्लाम से कहा कि मैं आपको कहां ढूंढूगा? तो उन्होंने कहा कि सेरात के पुल के पास।

अनस ने पूरे विश्वास के साथ पैग़म्बरे इस्लाम से अपनी शिफ़ाअत करने को कहा और पैग़म्बरे इस्लाम ने भी उन्हें इसका वचन दिया। यदि अनस को यह ज्ञात होता कि शिफ़ाअत अनेकेश्वरवाद है तो वह कभी भी पैग़म्बरे इस्लाम से शिफ़ाअत के लिए न कहते और पैग़म्बरे इस्लाम कभी भी उनको शिफ़ाअत का वचन न देते।

पैग़म्बरे इस्लाम के अन्य साथी जिन्होंने उनसे शिफ़ाअत की इच्छा प्रकट की सवाद बिना आज़िब हैं। उन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम की प्रशंसा में शेर कहे और शेर में ही उन्होंने पैग़म्बरे इस्लाम से शिफ़ाअत की मांग की। उनके शेर का अनुवाद हैः हे पैग़म्बर प्रलय के दिन मेरी शिफ़ाअत करने वाले बनें, जिस दिन किसी अन्य की शिफ़ाअत खजूर की गुठली के चीरे की मात्रा में भी सवाद बिन आज़िब के काम नहीं आएगी।

सलफ़ी मत के वैचारिक गुरू इस प्रकार की हदीसों की ओर संकेत नहीं करते और उसकी व्याख्या नहीं करते जैसे सूरए निसा की 64वीं आयत, जिसमें शिफ़ाअत

के विषय को स्पष्ट शब्दों में पेश किया गया है। इस आयत में हम पढ़ते हैं कि और हमने किसी पैग़म्बर को भी नहीं भेजा किन्तु केवल इसलिए कि ईश्वरीय आदेश से उसका अनुसरण किया जाए और काश जब उन लोगों ने अपनी आत्मा पर अत्याचार किया था तो आप उनके पास आते और स्वयं भी अपने पापों के लिए क्षमा करते और पैग़म्बर भी उनके लिए पापों की क्षमा करते तो यह ईश्वर को बड़ा ही तौबा स्वीकार करने वाला और दयालु पाते।

इस आयत में ईश्वर स्पष्ट शब्दों में बंदो के पापों को क्षमा करने के लिए अपने पैग़म्बर को माध्यम व मध्यस्थ बताता है। सुन्नी समुदाय के बड़े धर्मगुरू फ़रूद्दीन राज़ी अपनी पुस्तक तफ़सीरे कश्शाफ़ में इस संबंध में लिखते हैं कि पैग़म्बरे इस्लाम ने उनके लिए क्षमा याचना की। इसका उद्देश्य पैग़म्बरे इस्लाम के स्थान को श्रेष्ठ करना है। यह इस अर्थ में है कि वे लोग उस व्यक्ति के पास आए जो श्रेष्ठ स्थान पर असीन और ईश्वर का दूत है। अनदेखे संसार की वास्तविकता उस पर ईश्वरीय आदेश वहि द्वारा उतरती हैं और ईश्वर के बंदों के बीच ईश्वर का प्रतिनिधि है क्योंकि वह उस श्रेष्ठ स्थान का स्वामी है जिसमें उनकी शिफ़ाअत रद्द नहीं होगी।

जबकि ईश्वर ने स्वयं ही स्पष्ट रूप से यह अधिकार अपने पैग़म्बर को दिया है फिर वहाबी क्यों इसे रद्द करते हैं? यहां पर उचित है कि इबने तैमिया की वह बात भी सुना जाए जिसमें वह कहता है कि ईश्वर ने अपने निकटवर्ती बंदों को शिफ़ाअत का अधिकार दिया है किन्तु हमें इसकी मांग से रोका है। यह औचित्य इस बात का सूचक है कि शिफ़ाअत के विषय में सलफ़ी बंद गली में पहुंच गये हैं क्योंकि ईश्वर ने सूरए निसा की 64वीं आयत में अपने बंदों से कहा है कि वह पैग़म्बर से शिफ़ाअत की मांग करें। इस बात के अतिरिक्त क्या यह संभव है कि ईश्वर किसी को किसी वस्तु का अधिकार दे और उसके प्रयोग से उसे रोक दे? इस बात में ही स्पष्ट रूप से विरोधाभास है? यदि ईश्वर ने यह अधिकार अपने निकटवर्ती बंदों को दिया है तो यह इस अर्थ में है कि दूसरे इस अधिकार से लाभान्वित हों, न यह कि इसकी मांग ही न करें। यहां पर एक कहने को दिल चाह रहा है कि सलफ़ियों की हर बातों व तर्कों में सदैव बहुत अधिक विरोधाभास पाया जाता है जो इस बात की निशानी है कि इस पथभ्रष्ट संप्रदाय का तर्क बहुत ही कमज़ोर है।

वहाबियत या जंगलीपन

हिंसा और निर्दयता में प्रसिद्ध सऊद इब्ने अब्दुल अज़ीज़ ने मक्के पर क़ब्ज़ा करने के दौरान सुन्नी समुदाय के बहुत से विद्वानों को अकारण ही मार डाला और मक्के के बहुत से प्रसिद्ध व प्रतिष्ठित लोगों को बिना किसी आरोप के फांसी पर चढ़ा दिया। प्रत्येक मुसलमान को, जो अपनी धार्मिक आस्थाओं पर डटा रहता है, विभिन्न प्रकार की यातनाओं द्वारा डराया जाता है और नगर-नगर और गांव-गांव में पुकार लगाने वाले भेजे जाते थे और वे ढ़िढोंरा पीट पीट कर लोगों से कहते थे कि हे लोगो सऊद के धर्म में प्रविष्ट हो जाओ और उसकी व्यापक छत्रछाया में शरण प्राप्त करो।

उस्मानी शासन के नौसेना प्रशिक्षण केन्द्र के एक उच्च अधिकारी अय्यूब सबूरी लिखते हैं कि अब्दुल अज़ीज़ इब्ने सऊद ने वहाबी क़बीलों के सरदारों की उपस्थिति में अपने पहले भाषण में कहा कि हमें सभी नगरों और समस्त आबादियों पर क़ब्ज़ा करना चाहिए।

अपनी आस्थाओं और आदेशों को उन्हें सिखाना चाहिए। हम अपनी इच्छाओं को व्यवहारिक करने के लिए सुन्नी समुदाय के उन धर्मगुरूओं का ज़मीन से सफाया करने पर विवश हैं जो सुन्नते नबवी और शरीअते मुहम्मदी अर्थात पैग़म्बरे इस्लाम के चरित्र तथा मत का अनुसरण करने का दावा करते हैं,

विशेषकर प्रसिद्ध व जाने माने धर्मगुरूओं को तो बिल्कुल नहीं छोड़ेंगे क्योकि जब तक वे जीवित हैं, हमारे अनुयायी प्रसन्न नहीं हो पाएंगे। इस प्रकार से सबसे पहले उन लोगों का सफाया करना चाहिए जो स्वयं को धर्मगुरू के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

सऊद इब्ने अब्दुल अज़ीज़, मक्के का अतिग्रहण करने के बाद अरब उपमहाद्वीप के दूसरे महत्त्वपूर्ण नगरों पर क़ब्ज़े के प्रयास में रहा और इस बार उसने जद्दह पर आक्रमण किया।

इब्ने बुशर जो स्वयं वहाबी है, तारीख़े नज्दी नामक पुस्तक में लिखता है कि सऊद, बीस दिनों से अधिक समय तक मक्के में रहा और उसके बाद वह जद्दह पर क़ब्ज़े के लिए मक्के से निकला। उसने जद्दह का परिवेष्टन किया किन्तु जद्दह के शासक ने बहुत से वहाबियों को तोप से उड़ा दिया और उन्हें भागने पर विवश कर दिया। इस पराजय के बाद वहाबी मक्के नहीं लौटे बल्कि वे अपनी मुख्य धरती अर्थात नज्द चले गये क्योकि उन्होंने सुना था कि ईरान की सेना ने नज्द पर आक्रमण कर दिया है। यह स्थिति मक्के को वहाबियों के हाथों से छुड़ाने का सुनहरा अवसर थी। मक्के के शासक शरीफ़ ग़ालिब ने, जो वहाबियों के आक्रमण के बाद जद्दह भाग गया था, जद्दह के शासक के सहयोग से भारी संख्या में सैनिकों को मक्के भेजा। यह सैनिक तोप और गोलों से लैस थे और

वहाबियों की छोटी सी सेना को पराजित करने और मक्के पर विजय प्राप्त करने में सफल रहे।

इसके बावजूद संसार के मुसलमानों के सबसे पवित्र स्थान मक्के पर क़ब्ज़े के लिए वहाबियों ने यथावत प्रयास जारी रखे।

वर्ष 1804 में सऊद के आदेशानुसार जो वहाबियों का सबसे शक्तिशाली शासक समझा जाता है, पवित्र नगर मक्के का पुनः परिवेष्टन कर लिया गया। उसने मक्केवासियों पर बहुत अत्याचार किया यहां तक कि बहुत से मक्कावासी भूख और अकाल के कारण काल के गाल में समा गये।

सऊद के आदेशानुसार, मक्के के समस्त मार्गों को बंद कर दिया गया और जितने भी लोगों ने मक्के में शरण ले रखी थी, सबकी हत्या कर दी गयी। इतिहास में आया है कि मक्के में बहुत से बच्चे मारे गये और मक्के की गलियों में उनके शव कई दिनों तक पड़े रहे।

मक्के के शासक शरीफ़ ग़ालिब ने जिसके पास वहाबियों से संधि करने के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं था, वर्ष 1805 में वहाबियों से संधि कर ली। इतिहासकारों ने इस संदर्भ में लिखा कि मक्के के शासक ने भय के मारे वहाबियों

के आदेशों का पालन किया। मक्के पर उनके वर्चस्व के समय वह उनके साथ बहुत ही अच्छा व्यवहार करता रहा और उसने वहाबी धर्मगुरूओं को बहुत ही मूल्यवान उपहार दिए ताकि अपनी और मक्केवासियों की जान की रक्षा करे।

वहाबियों द्वारा मक्के के पुनः अतिग्रहण के बाद उन्होंने चार वर्षों तक इराक़ी तीर्थयात्रियों के लिए, वर्तमान सीरिया अर्थात शामवासियों के लिए तीन वर्षों तक और मिस्र वासियों के लिए दो वर्षों तक के लिए हज के आध्यात्मिक व मानवीय संस्कारों पर रोक लगा दी।

मक्के पर अतिग्रहण के बाद सऊद ने पवित्र नगर मदीने पर क़ब्ज़ा करने के बारे में सोचा और इस पवित्र नगर का भी परिवेष्टन कर लिया किन्तु वहाबियों की भ्रष्ट आस्थाओं व हिंसाओं से अवगत, मदीनावासियों ने उनके मुक़ाबले में कड़ा प्रतिरोध किया। अंततः वर्ष 1806 में पवित्र नगर पर क़ब्ज़ा कर लिया। वहाबियों ने पैग़म्बरे इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही वसल्लम के रौज़े में मौजूद समस्त मूल्यवान चीज़ों को लूट लिया किन्तु समस्त मुसलमानों के विरोध के भय से रसूले इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही व सल्लम के पवित्र रौज़े को ध्वस्त न कर सके। वहाबियों ने चार पेटियों में भरे हीरे और मूल्यवान रत्नों से बनी विभिन्न प्रकार की चीज़ों को लूट लिया। इसी प्रकार मूल्यवान ज़मुर्रद से बने चार

शमादान को जिनमें मोमबत्ती के बदले रात में चमकने वाले और प्रकाशमयी हीरे रखे जाते थे, चुरा लिया।

उन्होंने इसी प्रकार सौ तलवारों को भी चुरा लिया जिनका ग़ेलाफ़ शुद्ध सोने का बना हुआ था और जो याक़ूत और हीरे जैसे मूल्यवान पत्थरों से सुसज्जित थीं जिनका दस्ता ज़मुर्रद और ज़बरजद जैसे मूल्यवान पत्थरों का था। सऊद इब्ने अज़ीज़ ने मदीने पर क़ब्ज़ा करने के बाद समस्त मदीना वासियों को मस्जिदुन्नबी में एकत्रित किया और इस प्रकार से अपनी बातों को आरंभ किया। हे मदीनावासियों, आज हमने धर्म को तुम्हारे लिए परिपूर्ण कर दिया। तुम्हारे धर्म और क़ानून परिपूर्ण हो गये और तुम इस्लाम की विभूतियों से तृप्त हो गये, ईश्वर तुम से राज़ी व प्रसन्न हुआ, अब पूर्वजों के भ्रष्ट धर्मों को अपने से दूर कर दो और कभी भी उसे भलाई से न याद करो और पूर्वजों पर सलवात भेजने से बहुत बचो क्योंकि वे सबके सब अनेकेश्वरवादी विचारधरा अर्थात शिरक में मरे हैं।

सऊद ने अपनी सैन्य चढ़ाइयों में बहुत से लोगों का नरसंहार किया। उसकी और उस समय के वहाबी पंथ की भीषण हिंसाओं से अरब जनता और शासक भय से कांपते थे।

इस प्रकार से कि कोई मारे जाने के भय से हज या ज़ियारत के लिए मक्के और मदीने की यात्रा करने का साहस भी नहीं करता था। मक्के के शासक ने अपनी जान के भय से, सऊद की इच्छानुसार, मक्के और मदीने में पवित्र स्थलों और जन्नतुल बक़ीअ क़ब्रिस्तान को ध्वस्त करने का आदेश दिया। उसने हिजाज़ में वहाबी धर्म को औपचारिकता दी और जैसा कि वहाबी चाहते थे, अज़ान से पैग़म्बरे इस्लाम सलल्लाहो अलैह व आलेही व सल्लम पर सलवात भेजने को हटा दिया। अरब शासकों और हेजाज़ के प्रतिष्ठित लोगों ने जो इस पथभ्रष्ट पंथ की आस्थाओं और ज़ोरज़बरदस्तियों को सहन करने का साहस नहीं रखते थे, सबसे उच्चाधिकारी अर्थात उस्मानी शासक को पत्र लिखकर वहाबियों की दिन प्रतिदिन बढ़ती हुई शक्ति के ख़तरों से सचेत किया। उन्होंने बल दिया कि वहाबी पंथ केवल सऊदी अरब तक ही सीमित नहीं रहेगा बल्कि इसका इरादा समस्त मुसलमानों पर वर्चस्व जमाना और पूरे उस्मानी शासन पर क़ब्ज़ा करना है।

हेजाज़, यमन, मिस्र, फ़िलिस्तीन, सीरिया और इराक़ जैसी इस्लामी धरती पर शासन करने वाली उस्मानी सरकार ने मिस्र के शासक को वहाबियों से युद्ध करने का आदेश दिया।

यह वही समय था जब सऊद 66 वर्ष की आयु में दिरइये नामक स्थान पर कैंसर में ग्रस्त होकर मर गया और उसका अब्दुल्लाह नामक पुत्र उसकी जगह बैठा।

उस्मानी सरकार की ओज़ से लैस मिस्र का शासक मुहम्मद अली पाशा वहाबियों को विभिन्न युद्धों में पराजित करने में सफल रहा और उसने वहाबियों के चंगुल से मक्के, मदीने और ताएफ़ को स्वतंत्र करा दिया।

मिस्र के शासक ने इन युद्धों में वहाबियों के बहुत से कमान्डरों को गिरफ़्तार कर उस्मानी शासन की राजधानी इस्तांबोल भेज दिया। इस विजय के बाद मिस्र में जनता ने ख़ुशियां मनाई और विभिन्न समारोहों का आयोजन किया किन्तु वहाबियों की शैतानी अभी समाप्त नहीं हुई थी। मिस्र का शासक मुहम्मद अली पाशा ने समुद्री मार्ग से एक बार फिर अपनी सेना हेजाज़ भेजी। उसने मक्के को अपनी सैन्य छावनी बनाई और मक्के के शासक और उसके पुत्र को देश निकाला दे दिया और उनके माल को ज़ब्त कर लिया। उसके बाद वह मिस्र लौट आया और उसने अपनी ही जाति के इब्राहीम पाशा नामक व्यक्ति को लैस करके नज्द की ओर भेजा।

इब्राहीम पाशा ने वहाबियों के केन्द्र नज्द के दिरइये नगर का परिवेष्टन कर लिया। वहाबियों ने इब्राहीम पाशा के मुक़ाबले में कड़ा प्रतिरोध किया। तोप और गर्म हथियारों से लैस इब्राहीम पाशा ने दिरइये पर क़ब्ज़ा कर लिया और अब्दुल्लाह इब्ने सऊद को गिरफ़्तार कर लिया। अब्दुल्लाह इब्ने सऊद को उसके साथियों और निकटवर्तियों के साथ उस्मानी शासक के पास भेज दिया दिया गया। उस्मानी शासक ने अब्दुल्लाह और उसके साथियों को बाज़ारों और नगरों में फिराने के बाद उन्हें मृत्युदंड दे दिया। अब्दुल्लाह इब्ने सऊद के मारे जाने के बाद तत्कालीन शसक आले सऊद और उसके बहुत से साथियों ने विभिन्न इस्लामी जगहों पर समारोहों का आयोजन किया और बहुत ख़ुशियां मनाई।

इब्राहीम पाशा लगभग नौ महीने तक दिरइये नगर में रहा और उसके बाद उसने इस नगर को वासियों से ख़ाली कराने का आदेश दिया और उसके बाद नगर को बर्बाद कर दिया। इब्राहीम पाशा ने मुहम्मद इब्ने अब्दुलवह्हाब और आले सऊद की जाति और उसके बहुत से पौत्रों को मरवा दिया या देश निकाला दे दिया ताकि फिर इस ख़तरनाक पंथ का नाम लेने वाला कोई न रहे। उसके बाद नज्द और हेजाज़ में उस्मानी शासक की सफलताओं का श्रेय मिस्र के शासक मुहम्मद अली पाशा को जाता है। इस प्रकार से 1818 में वहाबियों का दमन हुआ और उसके लगभग एक शताब्दी तक वहाबियों का नाम लेने वाला कोई नहीं था।

सऊदी अरब में नज्द की धरती पर मिस्रियों की चढ़ाई का बहुत ही उल्लेखनीय परिणाम निकला था। अब्दुल अज़ीज़ और उसके पुत्र सऊद का विस्तृत देश बिखर गया और बहुत से वहाबी मारे गये। वहाबी पंथ का निमंत्रण और लोगों पर इस भ्रष्ट आस्था को थोपने का क्रम रूक गया और वहाबियों को लेकर लोगों के दिलों में जो भय था, वह समाप्त हो गया।

विषयसूची

वहाबियत इतिहास के दर्पण मे 1

वहाबियत, वास्तविकता व इतिहास 2

वहाबियत, वास्तविकता व इतिहास-2 8

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-3 15

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-4 24

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-5 32

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-6 39

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-7 48

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-8 55

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-9 63

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-10 71

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-11 80

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-12 88

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-13 97

वहाबियत, वास्तविकता और इतिहास-14 104

वहाबियत और उसकी असलियत 114

वहाबियत और मक़बरों का निर्माण 124

वहाबियत और शिफ़ाअत 132

वहाबियत या जंगलीपन 141

विषयसूची 150